लोकसभा चुनावों के परिणाम उम्मीदों के विपरीत हैं। भाजपा 370 पार नहीं कर सकी और राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) भी 400 आंकड़ा पार नहीं कर पाया। नतीजे ने ऐसे चौंकाया कि भाजपा अपने दम पर 273 का सामान्य बहुमत का आंकड़ा भी हासिल नहीं कर सकी, 240 पर अटक गई। भाजपा नीत राजग ने जरूर स्पष्ट बहुमत हासिल किया। सभी एग्जिट पोल्स ध्वस्त हो गए। विपक्षी गठबंधन इंडिया ने आशा से अधिक प्रदर्शन किया और 234 सीटें प्राप्त कीं, लेकिन इंडिया का सरकार बनाने का सपना पूरा नहीं हो सका। कांग्रेस शतक भी नहीं लगा सकी, 99 पर रह गई। इंडिया में सहयोगी दल सपा और डीएमके ने अच्छा प्रदर्शन किया। टीएमसी ने भी पश्चिम बंगाल में अधिक सीटें जीतीं। इस चुनाव में जहां राजग को स्पष्ट बहुमत मिला और नरेन्द्र मोदी लगातार तीसरी बार प्रधानमंत्री बनने जा रहे हैं। पंडित जवाहर लाल नेहरू के बाद वे दूसरे ऐसे नेता होंगे। विपक्षी गठबंधन इंडिया विपक्ष में रहेगा। राहुल गांधी का नेता के तौर पर कद बढ़ा है। इस बार के नतीजे में सबके लिए संतोष है, सभी दलों व नेताओं को अपनी-अपनी जनशक्ति का पता चला है और डराने-क्षमित करने वाले नेता भी खारिज हो गए हैं। चुनाव नतीजों व गठबंधन सरकार की चुनौतियों का विश्लेषण करता आजकल का यह अंक...

चुनाव परिणामों में सबके लिए संतोष

विश्लेषण
अवधेश कुमार
वरिष्ठ पत्रकार

लोकसभा का चुनाव परिणाम ऐसा है जिसमें ज्यादातर पार्टियों के पास सार्वजनिक स्तर पर संतोष और प्रसन्नता व्यक्त करने के अनेक आधार हैं। हालांकि कोई भी विश्लेषण करने के साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि लगातार दो बार सरकार में रहते हुए तीसरी बार गठबंधन के साथ सरकार बनाना साधारण परिघटना नहीं है। दूसरी ओर विपक्ष की सम्मिलित सीटों का भाजपा के पीछे रहना भी परिणाम का एक बड़ा पहलू है, लेकिन सच यह भी है कि भाजपा की पिछले लोकसभा चुनाव से 63 सीटें और 80 प्रतिशत मत घटे, लेकिन राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के साथ उसे बहुमत प्राप्त हुआ। कांग्रेस की सीटें 52 से बढ़कर 99 हो गई, मत प्रतिशत में भी लगभग 1.7% का की वृद्धि हुई।

अठारहवीं लोकसभा का चुनाव परिणाम ऐसा है जिसमें ज्यादातर पार्टियों के पास सार्वजनिक स्तर पर संतोष और प्रसन्नता व्यक्त करने के अनेक आधार हैं। हालांकि कोई भी विश्लेषण करने के साथ ही ध्यान रखना चाहिए कि लगातार दो बार सरकार में रहते हुए तीसरी बार गठबंधन के साथ सरकार बनाना साधारण परिघटना नहीं है। दूसरी ओर विपक्ष की सम्मिलित सीटों का भाजपा के पीछे रहना भी परिणाम का एक बड़ा पहलू है। लेकिन सच यह भी है कि भाजपा की पिछले लोकसभा चुनाव से 63 सीटें और 80 प्रतिशत मत घटे, लेकिन राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के साथ उसे बहुमत प्राप्त हुआ। कांग्रेस की सीटें 52 से बढ़कर 99 हो गई, मत प्रतिशत में भी लगभग 1.7% का की वृद्धि हुई। इसके साथ तृणमूल कांग्रेस ने 29 और सपा ने 37 सीटों के साथ अपेक्षा से बेहतर प्रदर्शन किया। महाराष्ट्र में उद्धव ठाकरे को नौ एवं शरद पवार को आठ सीटें ऐसी हैं कि वह भी दुखी नहीं। विपक्ष की ओर से उम्मीद से बुरा प्रदर्शन बिहार में राजद का चार सीटें पाना है। इसी तरह जगनमोहन रेड्डी की वाईएसआर कांग्रेस चार सीटों के साथ बुरी पराजय को प्राप्त हुई। विपक्ष में निराशाजनक प्रदर्शन अरविंद केजरीवाल की आम आदमी पार्टी का भी है, जो कांग्रेस से गठबंधन करने के बावजूद दिल्ली में फिर शून्य पर रही और पंजाब ने भी उसे निराश किया। वह केवल तीन सीटों तक सीमित रही है। भाजपा की ओर देखें तो इसके मुख्य साथियों तेलुगु देशम एवं जनता दल यूनाइटेड का प्रदर्शन अच्छा रहा और निश्चित रूप से इन पार्टियों के अंदर उत्साह का भाव है। चंद्रबाबू नायडू लंबे समय बाद प्रदेश के मुख्यमंत्री बन रहे हैं और विधानसभा में विपक्ष न के बराबर है तथा लोकसभा में भी तेलुगु देशम, भाजपा और जनसेना का ही वर्चस्व है।

निराशा का वातावरण नहीं

वास्तव में इस चुनाव परिणाम के साथ जिस ढंग से विश्लेषण आने शुरू हुए उनमें ज्यादातर एकपक्षीय थे। कांग्रेस, सपा या दूसरी पार्टियां भले कहें कि जनता ने भाजपा को हरा दिया लेकिन आरंभिक विजय उल्लास का शोर मचाने के दो-तीन दिनों बाद उन्हें भी भान हुआ कि इस परिणाम से उनके लिए सत्ता तक पहुंचना मुश्किल है, इसलिए आईएनडीआईए की बैठक में सरकार गठित करने के प्रयासों का फैसला नहीं हुआ। यह इस चुनाव परिणाम पर बहुत बड़ी टिप्पणी है। दूसरी ओर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में राजग तथा भाजपा संसदीय दल की बैठक हुई और सबमें सार्वजनिक तौर पर उम्मीद और उत्साह का वातावरण देखा गया। इन पंक्तियों के लिखे जाने तक 4 जून के परिणाम के साथ उत्पन्न सत्तारूढ़ पक्ष के अंदर निराशा का वातावरण कम से कम सतह पर नहीं दिख रहा और आईएनडीआईए के विजय का शोर भी रुका हुआ है। मतों के

हिसाब से देखें तो भाजपा अभी भी 36.5 प्रतिशत के साथ सबसे ऊपर है और कांग्रेस 21.19 प्रतिशत के साथ दूसरे स्थान पर लेकिन दोनों के बीच लगभग 15% का अंतर बताता है कि भारत की राजनीति नरेंद्र मोदी के 10 वर्षों के शासन के बावजूद अभी भी दोनों पार्टियों के लिए कहां-कहां हैं। विपक्ष में सपा को 4.58 प्रतिशत, तृणमूल कांग्रेस को 4.3 प्रतिशत मत मिले हैं। इसके बाद किसी का भी मत प्रतिशत संतोषजनक नहीं है। आप को केवल 1.11 %, तो राजद को 1.57% मत मिला है। वाम दलों में माकपा को 1.76 % मिला।

तीन बहुत बड़े आघात

भाजपा के लिए निश्चित रूप से उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र तीन बहुत बड़े आघात हैं। अगर उत्तर प्रदेश में ही उसे 32 स्थान और मिल गए होते तो उसे बहुमत प्राप्त हो जाता। उसे 41.37 प्रतिशत वोट मिले हैं जो पिछली बार से करीब 8 प्रतिशत कम है। इस पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है कि ऐसा क्यों हुआ सपा को 33.59 प्रतिशत मत मिले जो आज तक का सबसे बेहतर प्रदर्शन है। कांग्रेस का वोट 6.4 प्रतिशत से बढ़कर 9.46 प्रतिशत हो गया और बसपा का मत 12.8 प्रतिशत से घटकर 9.39 हो गया। पश्चिम बंगाल में तृणमूल कांग्रेस को 45.76 प्रतिशत तो भाजपा को 38.73 प्रतिशत मत मिला है। दोनों के मतों में पिछले लोकसभा चुनाव की तुलना में यह बहुत बड़ा अंतर है। कम्युनिस्ट पार्टियों ने भी कुल मिलाकर लगभग 6.5 प्रतिशत के आसपास मत प्राप्त किया है जिसमें माकपा 5.67 प्रतिशत है। इसके अलावा कांग्रेस का मत घटकर 4.68 प्रतिशत रह गया है। अगर इन दोनों राज्यों का विश्लेषण करें तो साफ हो जाएगा कि भाजपा के विरुद्ध थोड़े बहुत ही मत बंटे और मुख्य गोलबंदी उत्तर प्रदेश में सपा व कांग्रेस एवं बंगाल में तृणमूल कांग्रेस के पक्ष में हुआ। महाराष्ट्र में 13 सीटों के साथ कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी है, लेकिन वोट के मामले में भाजपा को 26.18 प्रतिशत तो कांग्रेस को 16.92 प्रतिशत वोट मिले हैं। राकांपा शरद को 10.27 प्रतिशत वोट मिला है तो शिवसेना उद्धव ठाकरे को 16.72 प्रतिशत मिले हैं। इसके परे देखें तो अजित पवार की राकांपा को केवल 3.60 प्रतिशत वोट तथा शिवसेना शिंदे को 12.95 प्रतिशत वोट मिले हैं।

व्यापक असंतोष कहीं नहीं

इन मतों का हम अपने अनुसार विश्लेषण कर सकते हैं। सच यह है कि इस चुनाव में तीन चार पहलू बहुत साफ दिख रहे थे। एक प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सरकार के विरुद्ध व्यापक असंतोष कहीं नहीं दिखता था और यह स्थिति नहीं थी कि लोग सरकार को उखाड़ फेंकना चाहते थे। दूसरी ओर विपक्ष को सत्ता में लाना है ऐसा भी मुखर वातावरण नहीं था। इसके साथ भाजपा और नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में राजग के उम्मीदवारों को हर हाल में जिताना ही है यह वातावरण भी ज्यादातर जगह नहीं था, किंतु एक बात अनेक जगह थी जहां भाजपा के कार्यकर्ता, स्थानीय नेता और प्रतिबद्ध समर्थक या तो उदासीन होकर निष्क्रिय थे या फिर मन से काम नहीं कर रहे थे या विरोध में थे। 500 वर्षों के बाद अयोध्या में श्रीराम मंदिर का निर्माण हुआ, रामलला की प्राण प्रतिष्ठा हुई, पूरे देश में अभूतपूर्व वातावरण बना, दुनिया भर में भारत विरोधी आतंकवादी मारे जा रहे हैं, भारत विश्व स्तर पर प्रभावशाली भूमिका में है, अर्थव्यवस्था विश्व में सबसे तेज गति से बढ़ रही है, भविष्य की तस्वीरें शानदार हैं। बावजूद अगर भाजपा के लोगों और समर्थकों में सरकार को पूरे देश में हर जगह भारी बहुमत से जीतने के लिए उत्साह से काम करने की प्रेरणा नहीं है और अनेक जगह वे विरोध में है तो यह बहुत बड़ी बीमारी का ही परिणाम हो सकता है जिसकी गहराई से समीक्षा नहीं करने पर भाजपा के लिए आगे बड़ा संकट हो सकता है। गठबंधन सरकार चलाने की मजबूरी में पार्टी का जनाधार घटने का जोखिम रहता है, खासकर भाजपा जैसी विचारधारा और बहुमत में भावुकता से काम करने वाले कार्यकर्ताओं वाली पार्टी को। वैसे प्रधानमंत्री मोदी एवं गठबंधन नेताओं के भाषणों से संतुलन व समन्वय का संदेश निकला है। बावजूद ओडिसा, मप्र, गुजरात, बिहार, दिल्ली, हिमाचल, उत्तराखंड, तेलंगाना आदि में भाजपा का शानदार प्रदर्शन बताता है कि नरेंद्र मोदी नाम, विचार और कार्य व्यवहार का प्रभाव काफी हद तक कायम है। हालांकि कांग्रेस के लिए यह चुनाव विजय उत्सव जैसा नहीं है, क्योंकि लगातार तीन चुनावों में भी वह 100 सीटों के नीचे है तो सत्ता में आने योग्य सीट पाने में उसे कितने वर्ष लगेंगे। यह भी ध्यान रखिए कि भाजपा के साथ जिन 215 सीटों पर उसका सीधा मुकाबला हुआ उनमें 153 पर वह पराजित हुई। पिछली बार 190 सीटों की सीधी टक्कर में भाजपा ने 175 सीट हासिल की थी। भाजपा ने 441 सीटों पर उम्मीदवार उतारे और उसके जीत का दर 55 प्रतिशत से ज्यादा रहा जबकि कांग्रेस ने 328 में केवल 30 प्रतिशत उम्मीदवारों को सफलता दिलाई। इसके विपरीत सपा ने 62 सीटों पर उम्मीदवार उतारे और 37 सीट का अर्थ है कि 60 प्रतिशत विजय।

चुनाव परिणाम के डरावने पक्ष भी

इस चुनाव परिणाम के डरावने पक्ष भी है। पंजाब से इंदिरा गांधी की हत्या करने वाले सुरक्षाकर्मी बेअंत सिंह के बेटे सरबजीत सिंह, आतंकवाद के आरोपों में जेल में बंद अमृतपाल सिंह और कश्मीर से शेख अब्दुल रशीद उर्फ इंजीनियर रशीद का चुनाव जीतना क्या हमें डराता नहीं है? अमृतपाल खजूर साहब से और राशिद जम्मू कश्मीर की बारामूला सीट से जीत गया है। वह आतंकवाद के वित्त पोषण के आरोप में 9 अगस्त, 2019 से तिहाड़ जेल में बंद है। अमृतपाल को अप्रैल 2023 में राष्ट्रीय सुरक्षा कानून के अंतर्गत गिरफ्तार कर असम की डिब्रूगढ़ जेल भेज दिया गया था। दोनों जेल में हैं, लेकिन चुनाव जीत गए। सरबजीत सिंह खालसा पूरे चुनाव में यही कहता रहा कि जिस प्रधानमंत्री ने श्री अकाल तख्त साहब को उठाया यदि उसका पोता सांसद बन सकता है तो इस अपमान का बदला लेने वाले बेअंत सिंह का बेटा संसद में क्यों नहीं जा सकता। इसके अनुसार अगर लोगों ने मतदान किया तो यह मतदाताओं के सामान्य मनोविज्ञान का परिचायक नहीं है। इसी तरह चुनाव में जाति का बोलबाला और उसके अनुसार आए परिणाम भी बहुत कुछ सोचने को विवश करता है। अभी चुनौतियां और भी हैं।

वैश्विक पटल पर मुखर रहेगा भारत

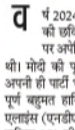

कूटनीति
प्रभात कुमार रॉय
विदेश मामलों के जानकार

वर्ष 2024 के लोकसभा चुनाव में सशक्त नेता की छवि वाले नरेन्द्र मोदी को राजनीतिक तौर पर अपेक्षित सफलता नहीं मिली, जिसकी चाह थी। मोदी की पूरी ताकत झोंकने के बावजूद उनकी अपनी ही पार्टी भाजपा को अपने दम पर लोकसभा में पूर्ण बहुमत हासिल नहीं हुआ। नेशनल डेमोक्रेटिक एलाइंस (एनडीए) भी पिछली दफा 2019 के चुनाव में हासिल 353 सीटों की तुलना में इस बार केवल 293 सीटों पर सिमट गया। एनडीए को बहुमत जरूर मिला है और नरेन्द्र मोदी ही एनडीए सरकार के मुखिया होंगे, पर इस बीच यक्ष प्रश्न है कि मोदी के राजनीतिक तौर पर कमजोर होने पर दुनिया के पटल पर भारत की स्थिति कैसी और क्या होगी? विशेष तौर पर अमेरिका और पश्चिमी देशों में भारत की विराट छवि पर क्या कुछ असर पड़ेगा अथवा नहीं? तो जवाब है कि विदेश नीति के मोर्चे पर चाहे कोई प्रधानमंत्री ताकतवर जनादेश से सत्ता में आए अथवा कमजोर जनादेश से, विश्व पटल पर भारत की हैसियत कदापित कम नहीं होगी। पूंजी निवेश के लिए भारत आकर्षक गंतव्य बना है और बना रहेगा। भाजपा के घोषणा पत्र में भारत को ग्लोबल मैन्युफैक्चरिंग हब बनाने का वादा है और अगले पांच वर्ष के दौरान इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए समुचित प्रयास किया जाएगा। अगले पांच वर्ष में भारत को दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था निर्मित करने का लक्ष्य प्राप्त करने की कोशिश भी होगी।

भारत पश्चिम के लिए महत्वपूर्ण

भारत वस्तुतः अमेरिका और पश्चिम देशों के लिए सदैव एक अत्यंत महत्वपूर्ण देश रहा है। भारत को लेकर तो अमेरिका की कूटनीतिक सोच एकदम स्पष्ट है कि वह विश्व पटल पर चीन की विकट शक्ति को संतुलित करने के लिए भारत को एक बहुत ही महत्वपूर्ण देश स्वीकार करता आया है। अमेरिका के अनेक वरिष्ठ राजनेता व्यक्तिगत रूप से नरेंद्र मोदी को पसंद नहीं करते, तो कुछ अमेरिकी राजनेता मोदी के बेहद निकट भी माने जाते हैं। भविष्य में भारत अगर चीन के विरुद्ध अमेरिका के पक्ष में सन्नद्ध हो जाता है तो पश्चिम और अमेरिका का दबदबा यकीनन बढ़ जाएगा और 21वीं सदी में काफी दिनों तक दबदबा कायम भी रह सकता है। दूसरा पहलू यह भी है कि यदि भारत अमेरिका के विरुद्ध रूस के साथ प्रतिबद्धता के साथ खड़ा हो जाए तो फिर पश्चिम का प्रभुत्व इसी सदी में जल्द ही खत्म हो जाएगा। नरेंद्र मोदी का तीसरी बार प्रधानमंत्री बनना अमेरिका और पश्चिमी देशों के लिए बड़ी उम्मीद और सावधानी को लेकर आया है। अंतरराष्ट्रीय मामलात के जानकार फरमाते हैं कि प्रधानमंत्री के तौर पर नरेंद्र मोदी के तीसरे कार्यकाल में भारत की विदेश नीति और अधिक शक्तिशाली होकर उभरेगी। निरंतर कमजोर होता हुआ अमेरिका, विस्तारवादी चीन और युद्धरत रूस वैश्विक पटल पर भारत की केंद्रीय भूमिका को और अधिक बढ़ा देंगे। खासकर मददगार देश के रूप में। अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अनेक विश्लेषकों का कहना है कि अगले 5 वर्षों में चीन के विरुद्ध सुरक्षा कवच के तौर पर अमेरिका के साथ भारत की रणनीतिक साझेदारी और अधिक शक्तिशाली बन जाएगी। अमेरिका और पश्चिमी देशों के साथ भारत के कूटनीतिक अंतरराष्ट्रीय संबंधों के निरंतर ताकतवर होने के साथ ही भारत में लोकतांत्रिक मूल्यों में कथित गिरावट के विषय में भी गहन चिंताएं पश्चिमी देशों में विद्यमान रही हैं। उल्लेखनीय है कि एक वर्ष पूर्व जब मोदी अमेरिका की ऐतिहासिक यात्रा पर गए थे तो अमेरिका के 70 से अधिक सांसदों ने अपने राष्ट्रपति को एक पत्र लिखा था। इस पत्र में आग्रह किया गया था कि

राष्ट्रपति जो बाइडेन भारत में लोकतंत्र के अधोपतन और प्रेस की आजादी को बाधित करने पर अपनी गहन चिंता व्यक्त करें। पश्चिमी देशों में मोदी के आलोचक सवाल उठाते रहे हैं कि भारत में लोकतांत्रिक उदारता में गिरावट आई है, जबकि चुनावी लोकतंत्र शक्तिशाली हुआ है। पश्चिमी देशों का नजरिया है कि भारत की विदेश नीति काफी कुछ आक्रामक हो चुकी है। अमेरिका और कनाडा में अनेक खालिस्तानी आतंकवादियों की हत्याओं को लेकर पश्चिम में काफी नाराजगी प्रकट की जा रही है। मोदी के राजनीतिक तौर पर कमजोर हो जाने से उनके पश्चिमी आलोचक खुश हैं, क्योंकि अमेरिका और कनाडा में ऐसा माना जा रहा है कि भारत की खुफिया एजेंसी का खालिस्तानियों की हत्याओं में हाथ हो सकता है। अमेरिका और यूरोप में भारतीय समुदाय को इस बात की खुशी है कि मोदी तीसरी बार भारत की कमान संभाल रहे हैं, हालांकि इस दफा वे गठबंधन के साथ हैं। भारतीय प्रधानमंत्री के रूप में हैट्रिक कायम करने वाले नरेंद्र मोदी को लेकर पाकिस्तान में अधिक रुचि देखने को मिलती है। पाकिस्तानी जनता भारत के चुनाव के प्रति कदापित उदासीन नहीं है जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है। विगत वर्षों में मोदी ने पाकिस्तान के प्रति आक्रामक रणनीति को अपनाया है। पाकिस्तान का सोचना है कि मोदी के नेतृत्व में भारत और पाकिस्तान के बहुत बिगड़े हुए रिश्ते के सुधारने की कोई उम्मीद नहीं की जा सकती है। इसके बावजूद पाकिस्तान का सोशल मीडिया मोदी के शासन काल में भारत के आर्थिक विकास और इंफ्रास्ट्रक्चर और निर्माण क्षेत्र के विकास की भरपूर प्रशंसा भी करता रहा है। पाकिस्तान के नीति नियंता सैन्य जनरल और राजनेताओं का कहना है कि नरेंद्र मोदी इस्लामोफोबिया के पैरोकारों में शामिल हैं। भारत-पाक के मध्य कश्मीर विवाद को लेकर और अधिक तनाव बढ़ सकता है। ऐसा प्रतीत होता है है कि भारत विश्व पटल पर पाकिस्तान को लगातार अलग-थलग रखने की अंतरराष्ट्रीय कोशिशें जारी रखेगा।

बांग्लादेश में स्वागत

बांग्लादेश में नरेंद्र मोदी के तीसरी दफा प्रधानमंत्री बनने काफी गर्मजोशी से स्वागत किया गया है। वर्ष 2014 में जब से नरेंद्र मोदी की सरकार हिंदुस्तान में आई दोनों देशों के बीच रिश्ते काफी घनिष्ठ और गर्मजोशी वाले बने रहे हैं। इसी दौरान दोनों देशों के बीच दशकों से चल रहे हैं अनेक विवाद सुलझाए गए हैं। शेख हसीना ने हमेशा ही फरमाया है कि बांग्लादेश किसी पार्टी विशेष के स्थान पर भारत सरकार के साथ संबंधों को शक्तिशाली बनाए रखने को प्राथमिकता देता है।

नेपाल में उत्सुकता

भारत के आम चुनाव को लेकर नेपाल में भी बहुत ज्यादा उत्सुकता बनी रही। प्रायः देखा गया कि दिल्ली में किसी भी राजनीतिक दल की सत्ता रहे दोनों देशों के बीच आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संबंधों पर बहुत अधिक असर नहीं पड़ता। भारत में हिंदुत्व के एजेंडे से जुड़ी पार्टी के सत्तासीन होने का नेपाल में हिंदू राज की पुरानी विरासत को फिर से पुनर्जीवित करने में रुचि रखने वाले राजनेताओं की सक्रियता बढ़ जाती है। 2014 में पहली बार नरेंद्र मोदी के सत्तासीन होने के पश्चात नेपाल में भूकंप में भारत द्वारा नेपाल की जबरदस्त मदद की गई। नेपाल में अंजाम दी गई आर्थिक नाकाबंदी के बाद भारत और नेपाल के संबंधों में खटास आई। अग्निवीर योजना के कारण भारतीय सैन्य सेवा में गोरखा सैनिकों की भर्ती बाधित हुई है। चिंता का विषय है कि साम्यवादियों के नेतृत्व में नेपाल का झुकाव चीन की तरफ निरंतर बढ़ रहा है। नेपाल के सेंट्रल बैंक में अभी पांच करोड़ मूल्य के पुराने भारतीय नोट पड़े हैं, जिन्हें 2016 में अंजाम दी गई नोटबंदी के कारण भारत सरकार द्वारा स्वीकार करने से इंकार कर दिया था। वर्तमान भारत की विदेश नीति विश्व मैत्री और विश्व शांति पर आधारित है यह पूर्वाग्रह से पूर्णतः मुक्त है और सैन्य गुटबंदियों से भी से भी एकदम मुक्त है। **शक्ति संतुलन :** अपनी तीसरी पारी में नरेन्द्र मोदी बहुध्रुवीय विश्व के सभी शक्ति केंद्रों के साथ संतुलन बनाकर रखेंगे, वैश्विक शांति के प्रयास करते रहेंगे,मदद का हाथ बढ़ाते रहेंगे और भारतीय हितों के अनुरूप ट्रेड व सामरिक संबंधों को मजबूत करते रहेंगे।

जनादेश में पक्ष-विपक्ष दोनों को संदेश

चुनाव परिणाम
अंजलि मिश्रा
राजनीतिक विश्लेषक

लोकसभा चुनाव के परिणामों की पक्ष-विपक्ष अपनी-अपनी तरह से व्याख्या कर रहा है। मगर नरेंद्र मोदी की लोकप्रियता के सर्वोच्च शिखर रथ पर सवार होने के बावजूद भाजपा अपने दम पर जिस तरह बहुमत से पिछड़ गई उसका संदेश है कि जनादेश केवल गठबंधन सरकार बनाने का ही नहीं है, बल्कि मजबूत विपक्ष का भी है। लोकसभा में सत्ताधारी एनडीए और विपक्षी गठबंधन इंडिया को मिले सीटों के आंकड़े इस आशय की तस्दीक भी करते हैं कि जनता देश में लोकतंत्र की मजबूती हर हाल में सुनिश्चित करना चाहती है और प्रचंड बहुमत की सत्ता के खतरों को लेकर वह सजग ही नहीं बेहद सतर्क भी है।

देश के संविधान की आत्मा के अनुरूप सत्ता-संचालन के स्पष्ट संदेश का यह जनादेश मोदी और भाजपा के लिए बदली परिस्थितियों में नई तरह की राजनीति के दौर शुरू करने के लिए है। जिसमें सत्ता टकराव की जगह समभाव रखते हुए व्यापक आम सहमति की राजनीति की राह पर चले, जहां पक्ष-विपक्ष एक दूसरे के दुश्मन नहीं बल्कि राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी होते हुए भी राष्ट्र की लोकतांत्रिक प्रगति और विकास के दो अटूट पहिए के रूप में दिखाई पड़ें। विभाजनकारी राजनीति के ज्वर से देश के सामाजिक और लोकतांत्रिक ताने-बाने को होने वाले गंभीर नुकसान को लेकर जनता ने ध्रुवीकरण की राजनीति को खारिज करते हुए लाल झंडी दिखा दी है। राम जन्म भूमि मंदिर निर्माण की नगरी अयोध्या, प्रयागराज, रामटेक, रामेश्वरम-कन्याकुमारी से लेकर हमारे ऐतिहासिक धार्मिक नगरों के चुनावी नतीजों में भाजपा की पराजय से बड़ा इसका कोई दूसरा सबूत नहीं हो सकता कि लोगों की आस्थाओं को सत्ता-सियासत का औजार बनाने के उपक्रम को जनता बखूबी समझ जाती है। जनता के समर्थन से सिंहासन पर आसीन होने के बाद जनता की सेवा ही सरकार का दायित्व है। यह बात राजनेताओं और राजनीतिक पार्टियों को समझने की जरूरत है।

लोकसभा चुनाव के नतीजों ने जहां भाजपा को देश की वास्तविकता के स्वरूप से रूबरू कराया है वहीं इंडिया गठबंधन की अगुवाई कर रही विपक्ष की सबसे बड़ी पार्टी कांग्रेस को इसने राहत दी है। पिछली दो लोकसभा में मुख्य विपक्षी दल का आधिकारिक दर्जा हासिल करने लायक सीटें जुटाने में असफल रही कांग्रेस ने 2024 में 99 सीटों के साथ शतक की दहलीज पर पहुंच गई है। चुनाव अभियान के दौरान जब पीएम मोदी और अमित शाह से लेकर भाजपा के तमाम शीर्ष नेता उनके 400 सीटों के दावे के मुकाबले में कांग्रेस को 40 सीटें भी नहीं मिलने की भविष्यवाणी कर रहे थे, तब मुख्यधारा की मीडिया से लेकर तमाम चुनावी विशेषज्ञ इसमें छौंक लगाते हुए देश के कांग्रेस मुक्त होने की टीका-टिप्पणी करने से भी गुरेज नहीं कर रहे थे। मगर नतीजों ने

साबित कर दिया है कि कांग्रेस पार्टी देश में भाजपा के मजबूत विकल्प के रूप में न केवल कायम है बल्कि उसकी वैचारिक धारा को समाप्त करने के प्रयासों को जनता स्वीकार नहीं करेगी। इसमें दो राय नहीं कि कांग्रेस व इंडिया की सफलता में राहुल गांधी की भूमिका अहम है। कन्याकुमारी से कश्मीर और मणिपुर से मुंबई तक की उनकी भारत जोड़ो तथा भारत जोड़ो न्याय यात्राओं ने कांग्रेस की कायापलट की इस कहानी का सियासी आधार तैयार करने में अहम भूमिका निभाई है। इसका एक अर्थ यह भी है कि देश की राजनीति में आने समय में जनता राहुल गांधी की ज्यादा व्यापक और बड़ी भूमिकाओं में निरंतर सक्रिय देखना चाहती है। कांग्रेस कार्यसमिति की शनिवार को हुई बैठक में सर्वसम्मति से प्रस्ताव पारित कर राहुल गांधी से लोकसभा में नेता विपक्ष बनने का किया गया आग्रह जनता की ऐसी ही आकांक्षाओं के अनुरूप है। कार्यसमिति के प्रस्ताव का संदेश साफ है कि राहुल गांधी 18वीं लोकसभा में नेता विपक्ष की जिम्मेदारी संभालने जा रहे हैं। चुनाव में अपनी राजनीतिक क्षमता का दमखम दिखाने के बाद राहुल नेता विपक्ष का पद संभालते हैं तो इसका दोहरा संदेश जाना तय है। पहला जहां इसके जरिए वे विपक्षी गठबंधन के भविष्य में प्रधानमंत्री पद के स्वाभाविक चेहरा होंगे। दूसरा भाजपा-संघ के वैचारिक तंत्र की ओर से बार-बार उनको एक अनिच्छुक राजनेता बताने के दुष्प्रचार पर संपूर्ण विराम लग जाएगा। लोकसभा चुनाव के दौरान राहुल गांधी ने सीधे-सीधे प्रधानमंत्री मोदी की सरकार पर जिस तरह आक्रामक हमले कर उनके अभेद्य-अपराजेय होने की धारणा को लगभग तोड़ा है उसे देखते हुए संसद के भीतर नेता विपक्ष के रूप में वे 'इंडिया' के लिए अहम साबित हो सकते हैं। हालांकि इस क्रम में राहुल को तृणमूल कांग्रेस तथा आम आदमी पार्टी जैसे इंडिया के कुछ घटक दलों के साथ रिश्ते साहज करने की चुनौती होगी, क्योंकि ये दोनों दल विपक्षी गठबंधन का हिस्सा होते हुए भी कांग्रेस का वर्चस्व स्वीकार करने से हिचकते रहे हैं।

कांग्रेस इंडिया गठबंधन लोकसभा में अपनी ताकत के सहारे जहां सरकार को मनमाने फैसले लेने से रोकने में सक्षम है। वहीं यह भी तय है कि देश के विकास व राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े मुद्दों और सवालों पर विपक्ष सकारात्मक भूमिका निभाएगा, क्योंकि कम से कम कांग्रेस और राहुल राष्ट्रहित और राजनीतिक हित को अलग-अलग रखने की अहमियत को जानते हैं।

नई लोकसभा के स्वरूप से यह भी सुनिश्चित हो गया है कि राजनीति पाला बदल के प्रयासों की आशंका हमेशा बनी रहेगी। पक्ष और विपक्ष दोनों इसको लेकर सतर्क रहेगा। भाजपा अपने चेहरे को एनडीए के सहारे लोकसभा अध्यक्ष बनाने के लिए हर दांव चलेगी। वहीं इंडिया गठबंधन गैर भाजपा दल से स्पीकर बने इसका प्रयास करेगा, ताकि सांसदों को तोड़कर सदन में बहुमत का आंकड़ा जुटाने जैसे खेल के खतरों को कम किया जा सके। भाजपा के लिए इसमें चुनौती होगी, क्योंकि उसके दो एनडीए सहयोगी तेलुगु देशम और जदयू दोनों पार्टियों में तोड़-फोड़ की सियासत से लेकर ध्रुवीकरण को हवा देने वाले एजेंडे को सहज रूप में स्वीकार्य नहीं करेंगे। ऐसे में प्रधानमंत्री मोदी के लिए तीसरा कार्यकाल उनके राजनीतिक कौशल की असल परीक्षा का दौर होगा। वे अपने राजनीतिक जीवन में पहली बार असल में गठबंधन की चुनौतियों से रूबरू होंगे। मोदी के नेतृत्व में निस्संदेह देश आगे बढ़ेगा।

बुद्धिमान लोगों का मानना है कि बुद्धि हर समस्या का समाधान कर सकती है। अमीर लोग पैसे की ताकत पर भरोसा करते हैं। अच्छे लोग दया और प्रेम पर भरोसा करते हैं। हालांकि, जीवन की चुनौतियों से निपटने के लिए इन तीनों का संतुलन वास्तव में आवश्यक है।
—हर्ष गोयनका, उद्योगपति @hvgoenka

विमर्श

विवेक निराला

जन विवेक और अभिजन विवेक

लोकतंत्र एक ऐसी सनातन कला जैसा लगता है जो अपने से अपनी ही शक्ति की प्रतिमा रच कर उसे बार-बार विसर्जित करता रहता है, और फिर नई रचता है। यूं देखने में लगता है कि लोकतंत्र मोहाग्रस्त है, हमेशा अपने दुखड़े रोता दिखाई देता है पर वह निष्ठुर भी है। अपने ही द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमा को खंडित कर समय की नदी में बहाया करता है। अगर बहाए नहीं तो फिर लोकतंत्र भी नहीं बचेगा। उसे बार-बार नया होने के लिए नई प्रतिमा गढ़नी पड़ती है।

अठारहवीं लोक सभा के चुनाव परिणामों ने लोकतंत्र में आस्थाओं को और गहरा किया है। अपने हितों और अधिकारों के प्रति जागरूक जनता के निर्णय तमाम राजनीतिक विश्लेषकों, पत्रकारों और राजनेताओं को चौंकाने वाले लग सकते हैं, मगर जनता ने अपने प्रतिनिधि का जो चुनाव किया है, उस पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए। लोकतंत्र में जनता और उसका विवेक सर्वोपरि है, लेकिन कुछ लोक सभा क्षेत्रों के चुनाव परिणामों उसमें भी अयोध्या के परिणाम से असंतुष्ट लोगों ने जनता के विवेक को ही चुनौती दे डाली। इनमें राजनीतिक दलों के कार्यकर्ताओं से लेकर फिल्म-संगीत की दुनिया के तमाम बड़े नाम भी शामिल हैं।

अयोध्या निश्चित रूप से हिन्दुत्व की प्रयोगशाला थी। राम-जन्मभूमि आंदोलन से भारतीय जनता पार्टी को विशाल जन-समर्थन मिला और सत्ता मिली। राम-मन्दिर निर्माण की सफलता से उत्साहित पूरे देश में अपनी इस उपलब्धि पर गर्वित भाजपा इस लोक सभा चुनाव में अयोध्या से ही अपनी हार पर चकित और हताश है। अब अयोध्या की जनता को तमाम गालियों के साथ ही कृतघ्न भी कहा जा रहा है।

सवाल यह है कि जनतंत्र में अपने हितों की रक्षा क्या सचमुच निंदनीय अथवा अपराध है! अयोध्या जितनी पौराणिक है, उतनी ही विशेषताओं और विविधताओं का संगम भी है। इसीलिए हिन्दू, बौद्ध, सिख, मुस्लिम सभी के लिए अयोध्या किसी तीर्थस्थल की तरह है। सभी धर्म के ईश्वर हों या पैगंबर, किसी न किसी तरह उनका अयोध्या से नाता जरूर है। अयोध्या में यूं तो 4000 से अधिक मंदिर हैं और इन्हीं में वे 36 मंदिर भी हैं, जो अलग-अलग जातियों के हैं। इनमें राजपूत मंदिर, निषाद मंदिर, हलवाई मंदिर, कुर्मी मंदिर, यादव मंदिर, पासी मंदिर, हेला मंदिर, मुराव मंदिर, पंचायती मंदिर आदि शामिल हैं।

मंदिर भले अलग-अलग जातियों के हों, उनकी व्यवस्था भले उन समाज के लोग देखते हों, लेकिन पूजा श्रीराम और माता सीता की ही होती है। शांति, सद्भाव और आस्था की प्रतीक अयोध्या की एक पहचान यह भी है। अयोध्या को एक प्रतीक के रूप में, एक समावेशी के रूप में, एक मर्यादा के रूप में जाना जा सकता है। एक ऐसा शहर जो बलिदान देना भी जानता है, और सजा देना भी जानता है। ऐसा शहर जो किसी के भी आगे दब्बा नहीं, लेकिन अपनी विनम्रता में झुका रहता है।

पूर्वज सदियों से याद दिलाते आए हैं कि रामायण पढ़ने से उजड़ी हुई अयोध्या फिर बस जाती है। वह अयोध्या धरती पर बसा कोई राज्य नहीं, मनुष्य का शरीर ही है। रामायण आह्वान करती है कि मनुष्य अनादि प्रकृति की श्रेष्ठतम उपलब्धि है। इसी मनुष्य के जागने, सोने और सपने देखने से यह विश्व प्रभावित होता है। रामायण आदर्श को इंसान होने की वह कला सिखाती है जिसे साध कर वह समझ सके कि निःस्वार्थ होकर परमार्थ को कैसे अपनाया जाता है। रामायण चुनाव जीतने की नहीं, सिर्फ अपने-अपने मन को जीतने की विधि बताती है। रामायण के मनुजरूप राम किसी प्रजा पर अपने राज्य करने को नहीं, प्रजा के दुख का भार उठाने की भूमिका को चुनते हैं। वे प्रजा के पक्ष में अन्याय की शक्तियों का सामना करते हैं। रामायण कहती है कि हाथ-पांव वाले प्रत्येक मानव ब्रह्म में ही संसार का प्रतिनिधि होने की योग्यता है। इतिहास साक्षी है कि अपने स्वरूप को न समझ पाने के कारण ही जीवन में पराधीनता आती है, और अन्याय की राजनीतिक शक्तियां मानव जाति को अपने रचे नरकों में बंदी बनाया करती है। ऐतिहासिक अयोध्या को भले ही तात्कालिक राजनीति बाहरी जगमगाहट से रौशन कर दे पर वह मन के उस अंधेरे को नहीं मिटा पाती जिसके कारण देह की अयोध्या बार-बार उजड़ती है।

मनुष्य का भाग्य केवल राजनीतिक मताधिकार से तब तक नहीं संवारा जा सकता जब तक कि वह पूरे जीवन के पक्ष में अपनी निःस्वार्थ नागरिकता को खुद न पहचान ले। अयोध्या में बहुत विकास हुआ, लेकिन यह सिर्फ राम मंदिर के तीन-चार किलोमीटर के दायरे तक सीमित रहा। फैजाबाद के गांवों तक नहीं पहुंचा। पिछले तीन-चार साल से यहां राम मंदिर ही केंद्र में था। अधिकारियों और सरकार का पूरा ध्यान मंदिर के जल्द से जल्द निर्माण और चुनावों से पहले उसके उद्घाटन पर था। इसकी वजह से अयोध्या के बाहर, गांवों के, लोगों के मुद्दे पीछे छूट गए। बड़ी आबादी को लगा कि उसे नजरअंदाज किया जा रहा है, और एक नाराजगी पैदा हुई। अयोध्यावासी राम मंदिर के निर्णय से बहुत खुश थे, सभी ने दीपक जलाया था। जब विस्तारीकरण का काम शुरू हुआ तब भी बहुत अच्छा लगा, लेकिन सरकार ने फिर मनमानी की, किसी की नहीं सुनी, लोगों की दुकानें ले लीं, लेकिन पर्याप्त मुआवजा नहीं दिया। लोगों को उठा कर पेनेक दिया गया, बिना उनके लिए कोई व्यवस्था किए।

इसे लेकर स्थानीय लोगों में बहुत आक्रोश था। लोगों ने इसे जाहिर किया तो किसी ने नहीं सुनी। यदि मीडिया यहां के स्थानीय लोगों के मुद्दों को जगह देता तो शायद उन पर चर्चा होती और उन्हें गंभीरता से लिया जाता, लेकिन टीवी पर सिर्फ यह दिखाया जाता रहा कि बीजेपी भगवान राम को लाई है, अयोध्यावासियों के क्या मुद्दे हैं, इन पर चर्चा ही नहीं हुई। आंखों में बसे आकाश में भेदभाव की कालिख भरती जा रही है। हृदय के जल में भरता जा रहा घृणा का कचरा जो सबको पार लगाने वाली करुणा की नौका को तोड़ सकता है। अपने आपको भूलते जा रहे लोगों के मन में दबी क्रोध की चिंगारियों की राख सबके जीवन पर झर रही है। ज्यादातर लोग अपनी-अपनी चुप्पियां चुन कर जीवन काट रहे हैं। लगता है कि जीवन में साहस कम पड़ता जा रहा है। भेदभाव की दीवारें खड़ी करते, धर्म में पाखंड को पनाह देते, मजहबी आतंक को फैलाते और व्यापार में देश के साधन लूटते, पारंपरिक कर्मकुशल जीवन को असहाय बनाते अश्लील परिवेश में वह आदमी कैसे जिंदगी गुजारे जो इस पाप में भागीदार नहीं? रचनाशील जीवन का घर बसाने वाली वे संस्थाएं मिटती चली गईं जिनमें थोड़ी-सी राहत मिलती थी। जहां अपने होने का कुछ सबूत तो दे ही सकते थे। अब तो कुतर्कपूर्ण, अराजक शोर के बीच कहीं खड़े होने की जगह ही नहीं मिल रही। नफरत में जीने वाले उचित-अनुचित में भेद नहीं कर पाते। जो उनके विरोध में आता है, वह शिकार बनता है। राम अपने अवध से और उसके लोगों से प्रेम करते हैं। अवध और अयोध्यावासियों पर आए संकट को स्वयं पर लेते हैं, इसीलिए यदि कभी अवध को छोड़ना पड़ा तो वह भी करते हैं। अपने जन की निंदा भी राम को प्रिय नहीं।

(लेखक समकालीन कवि हैं) ■

> अधिकारियों और सरकार का पूरा ध्यान मंदिर के जल्द से जल्द निर्माण और चुनावों से पहले उसके उद्घाटन पर था। इसकी वजह से अयोध्या के बाहर, गांवों के लोगों के मुद्दे पीछे छूट गए। बड़ी आबादी को लगा कि उसे नजरअंदाज किया जा रहा है और एक नाराजगी पैदा हुई। अयोध्यावासी राम मंदिर के निर्णय से बहुत खुश थे, सभी ने दीपक जलाया था। जब विस्तारीकरण का काम शुरू हुआ तब भी उन्हें बहुत अच्छा लगा, लेकिन सरकार ने फिर मनमानी करनी शुरू कर दी और किसी की नहीं सुनी, लोगों की दुकानें ले लीं, लेकिन पर्याप्त मुआवजा नहीं दिया

अखिलेश आर्येन्दु

गढ़ा गया झूठ और राजनीति

दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र का सबसे बड़ा उत्सव समाप्त हो गया। कौन दल विजयी हुआ, कौन हारा, यह उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना यह कि भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों और जीवन मूल्यों की हिफाजत के लिए किसने किस तरह की दृढ़ इच्छाशक्ति दिखाई और किसने सत्ता हासिल करने के लिए लफ्फाजी और झूठ के सहारे समाज को गुमराह करने को ही अपनी विजय समझा? न आरक्षण खत्म हो रहा है और न संविधान खतरे में है। ऐसे गढ़े हुए तमाम सफेद झूठों से भारतीय समाज का कितना नुकसान होता रहा है, सत्तालोलुपियों को शायद ही कभी समझ में आए?

मेरे विचार से मानवीय मूल्यों, परंपराओं और सद्प्रवृत्तियों को मानव स्वभाव और समाज का हिस्सा बनाने का यह लफ्फाजी भरा दौर है। समस्या-समाधान, हिंसा-अहिंसा, न्याय-अन्याय, प्यार-नफरत और सहिष्णुता-असहिष्णुता के वैचारिक-व्यावहारिक सच के घालमेल से अच्छे-बुरे का फर्क खत्म होता जा रहा है। यह सब सोची-समझी नकारात्मक मनोवृत्ति के तहत किया जा रहा है। इस तरह की मनोवृत्तियों को राजनीति से ही संरक्षण नहीं मिल रहा है, बल्कि मजहबी और भाईचारे के झंडाबरदारों की ओर से भी मिलता दिखाई पड़ रहा है। किसी धर्मगुरु, राजनेता या फिल्मी सितारे के लिए पागलपन की हद तक दिवानगी और उस दिवानगी में परिवार, समाज, संस्कृति और धर्म (सुगी) के मूल्यों और समूह परंपराओं को तहस-नहस करने में भी कोई संकोच न करना, क्या ये श्रद्धा, भक्ति या किसी के दिवाने होने के प्रमाण हैं या मूढ़ता की परिचायक हैं? पिछले कुछ दशकों में इस तरह की हजारों घटनाएं और दुर्घटनाएं देश-दुनिया में घटी हैं जिन्हें बाकायदे धर्म, भक्ति, श्रद्धा और प्यार की दिवानगी का मुलम्मा चढ़ाकर महिमा मंडित किया गया। भारत में ऐसी घटनाएं आम हो गई हैं, इसलिए सामान्य मान कर नजरअंदाज कर दी जाती हैं।

लगता है विचारों और समझ में अपंगता का दौर चल रहा है। जन्मगत जाति, अपना पराया, अपना मजहब, अपना समुदाय और अपना परिवार इस दायरे में जीने वाले लोग क्या देश, समाज, मानव संस्कृति, मानव धर्म और सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया को मानव मूल्यवादी धारा की तरफ कभी देखने की कोशिश करते दिखते हैं?

जिन संकीर्णताओं ने इंसान को इंसान को बांटा उन संकीर्णताओं को जिंदगी जीने का आधार समझना क्या उस पंगु सोच का हिस्सा नहीं है जो दुनिया में एकता, भाईचारे और सहिष्णुता की पवित्र धारा को अवरोधित करने का काम कर रही है? हम खुद को दुनिया का सबसे समझदार समाज होने का दंभ भरकर अपनी खामियां पर गौर करना भूल गए हैं। तमाम सवाल हमारे इर्द-गिर्द घूमड़ते रहते हैं, लेकिन कभी उस तरफ हम गौर करना भी ठीक नहीं समझते? भारतीय समाज आजादी के बाद कई बदलावों के दौर से गुजरता आ रहा है। लेकिन उन बदलावों से हमने सीखने-समझने की आदत नहीं डाली। परिणाम है कि हम महज स्कूली शिक्षा हासिल कर खुद को अधिक समझदार समझने लगे हैं। इंसानियत की धारा को हिफाजत करना हमारा कर्त्तव्य होना चाहिए जिस पर हमने गौर ही नहीं किया। किया होता तो समाज में आए बदलावों पर निगाह रखते और जो कुछ नकारात्मक दिशा की तरफ जाता दिखता उसे अस्वीकार करने के लिए आवाज उठाते।

मानवीय सभ्यता हिंसा, शोषण और क्रूरता की भयंकर अंधकार वाली गुफा की ओर बढ़ रही है। मूल्यवादी, ज्ञानवादी, चरित्रवादी और विचारवादी शक्तियां मौन रह कर तमाशबीन बनी हुई हैं, ऐसे में कैसे इंसानी मूल्यों, समृद्ध परंपराओं की हिफाजत की जाए? कैसे सज्जन-शक्ति को दुर्जन-शक्ति का शासक बनाया जाए? इस पर खुले दिल-दिमाग से विचार करने की जरूरत महसूस होती है। सकारात्मक सोच, सकारात्मक मनोवृत्तियों और सकारात्मक लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने का आह्वान मिलकर करने की जरूरत है। बंद मजबूत मुट्ठियों को इंकलाबी बदलाव के लिए अवसर का इंतजार नहीं, बल्कि आत्मविश्वास के साथ दृढ़ इच्छाशक्ति का परिचय देना चाहिए। अंधेरा घना तो है लेकिन दीपक जलाना कब मना है? ■

पुस्तक समीक्षा | चांद खां रहमानी

अंधविश्वास पर चोट

लेखक-संपादक चंद्रमणि रघुवंशी की यह चौथी किताब है, जिसका नाम है 'समाज के सवाल'। इससे पहले 'कोख से सूरज की कारा तक', 'अंदर की आग' और 'बर्फ का फूल' (दोनों काव्य संग्रह) 'कतरा और समन्दर' सामाजिक समस्याओं पर आधारित हैं, जो प्रकाशित हो चुकी हैं। दरअसल, 'समाज के सवाल' किसी एक विषय पर आधारित नहीं है, बल्कि उन संपादकीय का संकलन है, जो स्व. बाबू सिंह चौहान ने अपने संपादक काल में लिखे थे। इनमें कुछ संपादकीय रघुवंशी ने भी लिखे हैं। भले ही ये संपादकीय पहले लिखे गए थे लेकिन उनका चुनाव सावधानी से किया गया है कि वह आज भी प्रासंगिक और ताजा लगते हैं।

किताब के लेख अब सामयिक क्यों लगते हैं? क्योंकि किताब सरकार, समाज और कानून से चौतरफा सवाल करती है। इतना ही नहीं, अंधविश्वास और साम्प्रदायिकता पर भी गहरी चोट करती है। सबसे पहले किताब राम को खोजती है। उन राम को जिनके नाम से 'रामराज' की कल्पना की जाती है कि राम जिनके नाम से राजनीति हो रही है। लेखक उन राम की तलाश में निकलता है, जिन्होंने बुराई के खिलाफ युद्ध लड़ा था। वह राम तो नहीं मिलते, आज का राम मिलता है, जो खेत में काम कर रहे है, सड़कों पर पथर तोड़ रहा होता है, मिल में मजदूरी करता है, शोषण का शिकार है, मगर वह आसुरी शक्तियों के खिलाफ न बोल सकता है, न लड़ सकता है।

हां, रावण अपनी पूरी ताकत से पहले की तरह सत्ता पर काबिज होकर तेज गति से लोगों पर अत्याचार और उनका शोषण कर रहा है। किताब अंधविश्वास, जादू-टोना और पाखंड पर जबरदस्त प्रहार करती है, और लोगों को इस तरह की बातों से सावधान रहने का आग्रह करती है। किताब बताती है कि सारी चकाचौंध करने वाली उपलब्धियों के बावजूद जनमानस आम तौर पर वहीं स्थिर है, जहां उन दिनों था जब ज्ञान-विज्ञान के द्वार भारत के लिए साम्राज्यवादी शिलाखंड ने बंद कर दिए थे। हालत यह है कि विज्ञान की इतनी प्रगति के बाद भी लोग बच्चा पैदा करने के लिए तांत्रिक की सलाह पर या उसकी बातों में आकर किसी के बच्चे की बलि चढ़ा देते हैं। किसी भी तरह की हर समस्या का घंटों में समाधान करने का दावा करने वाले तांत्रिकों और बाबाओं को देश में कमी नहीं है। इनके चक्कर में आकर लोग अपना धन गंवा बैठते हैं, और महिलाएं इज्जत।

लेखक सांप्रदायिकता को देश का सबसे बड़ा खतरा बताते हुए सांप्रदायिक संगठनों से सावधान रहने की चेतावनी देता है। ये संगठन धर्मनिरपेक्षता के मुकाबले में हिन्दुत्वाद का बिगुल बजाने के लिए संघर्षरत हैं। लेखक मानव अंग बेचने के अमानवीय कार्य पर उंगली उठाते हुए सरकार से सवाल करता है कि यह अमानवीय कार्य कब रुकेगा? लेखक कभी शांति की खोज में निकल पड़ता है मगर शांति कहीं नहीं मिलती। 'कड़वापन और सत्य का स्वाद' में बताया गया है कि कड़वा सत्य कोई सुनना नहीं चाहता। कभी उपभोक्ता के अधिकारों पर कलम चलती है, तो कभी फिलोसफी पर तो कभी कुशुर्मों के अधिकारों पर। कुल मिलाकर किताब एक बार पढ़ी जा सकती है। पुस्तक में कुल 110 लेख हैं।

पुस्तक : समाज के सवाल
लेखक : चंद्रमणि रघुवंशी
प्रकाशक : हिन्दी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उप्र)
मूल्य : 250/रु. ■

राग रंग | आलोक पराड़कर

प्रतिबद्धता में प्रवीण

उर्दू के प्रसिद्ध रचनाकार शम्सुर्रहमान फारूकी (अब दिवंगत) ने अपने नगर के रंगकर्मी प्रवीण शेखर के बारे में लिखा है, 'प्रवीण शेखर रंगमंच से केवल जुड़े हुए नहीं हैं, मैं उन्हें कई बरस से देख रहा हूं कि वे थिएटर जी रहे हैं, और थिएटर उनमें जी रहा है। इस जमाने में जब कला के सारे काम और विशेषकर रंगमंच से जुड़े हुए काम कोई बड़े फायदे का सौदा नहीं है, प्रवीण शेखर जैसे लोगों का दम बहुत गनीमत है।' प्रवीण शेखर कहते हैं, 'कई बार बहुत उदास हो जाता हूं, अवसाद आता है, सोचता हूं रंगमंच छोड़ दूं लेकिन फिर एक ऊर्जा भी इसी रंगमंच से मिलती है। नये उत्साह से जुट जाता हूं।' वास्तव में बनारस, इलाहाबाद, कानपुर, गोरखपुर, शाहजहांपुर जैसे तमाम उन शहरों में जहां हिन्दी रंगमंच फायदे का सौदा तो दूर, कबीर के शब्दों में कहें तो 'जो घर फूंके आपना, चलै हमारे साथ' जैसा है, अगर हिन्दी रंगमंच में सक्रियता लगातार बनी हुई है, उसकी ताकत, उसकी आग बची हुई, तो यह प्रवीण शेखर जैसे प्रतिबद्ध रंगकर्मियों के कारण ही संभव हो सका है, जो तमाम मुश्किलों के बावजूद अपने-अपने नगरों में इसकी अलख को जगाए हुए हैं।

प्रवीण इलाहाबाद में वैकरूटेज संस्था के निदेशक हैं, अपने शहर में तो नाटक करते ही हैं, जगह-जगह नाट्य प्रस्तुतियों के लिए बुलाए जाते हैं। रंगमंच के फुलटाइमर हैं, फोन करिए तो उधर से आवाज आती है, 'भाई, रिहर्सल में हूं, खाली होकर फोन करता हूं', या फिर 'भाई, कुमुद जी (अभिनेता कुमुद मिश्र) आए हैं, उनके साथ सिविल लाइंस निकला हूं।' चिंतनपरक, रचनात्मक और प्रयोगधर्मी रंगकर्म में प्रवीण 1988 से लगातार सक्रिय हैं। 30 से अधिक नाटकों में निर्देशन और करीब इतने ही नाटकों में अभिनय करने वाले प्रवीण के नाटक भारंगम सहित विभिन्न नाट्य समारोहों में प्रमुखता से शामिल होते रहे हैं। लेकिन सभी जानते हैं कि लंबे समय तक इस प्रकार समर्पित होकर रंगमंच करते जाने की राह इतनी आसान नहीं होती। प्रवीण के लिए यह थोड़ी और मुश्किल रही।

प्रवीण ने पहली-पहली बार पिता के साथ गांव से शहर आकर उनके कार्यालय के किसी समारोह में नाटक देखा था। लगा कि यही वह क्षेत्र है जहां काम करना चाहिए। इलाहाबाद में जुट गए लेकिन कुछ ही वर्षों में कठिन मुश्किल की धड़ी सामने थी। वह 'दंगा' नाटक में अभिनय करने वाले थे, 1993 में उसी दिन उनके पिता का देहांत हो गया। हतप्रभ थे लेकिन मां की हिम्मत ने उन्हें नाटक करने का हौसला दिया। यह हौसला हमेशा तब-तब काम आता रहा, जब-जब वे रंगमंच की राह में कमजोर पड़ते। यही वह ताकत थी जिसने रंगमंच के लिए सरकारी नौकरी छोड़ने जैसा बड़ा फैसला करने का साहस दिया। प्रवीण बताते हैं, 'मेरी नौकरी एजी ऑफिस में थी। सम्मानजनक पद और वेतन, दोनों था लेकिन मुझे लगा कि जीवन एक है और रंगमंच में कुछ करना है तो कर लेना चाहिए।' जीवन तब भी ठहर गया था जब वीए तृतीय वर्ष के दिनों में, इलाहाबाद में ट्रेन एक्सीडेंट में हाथ का हिस्सा चला गया लेकिन मुस्किलें आती रहीं, जुनून, साहस और जीवटता से हारती रहीं।

प्रवीण की प्रतिभा के कई अन्य आयाम भी हैं। उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी सम्मान, भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय के सीनियर फेलो, इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अवॉर्ड ऑफ एक्सीलेंस सहित कई सम्मानों से अलंकृत प्रवीण विभिन्न कला विधाओं पर लगातार लेखन और शोध करते रहे हैं। पुस्तक 'रंग सृजन' भी निकल चुकी है। प्रवीण द्वारा निर्देशित नाटकों में खारू का खरा किस्सा, हवालात, तीस मार खान, कागज के पक्षी, बाजी, पक्षी और दीपक, द सेकेंड सेक्स, माय फेयर लेडी, तितिया चरित्तर प्रमुख हैं जबकि उन्होंने तुगलक, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, महाभोज, प्रगतिशील नाटकों में भूमिकाएं की हैं। उज्जैन में उन पर नाट्य समारोह 'रंग प्रवीण शेखर' करने वाले अभिनव रंगमंडल ने सम्मान पत्र में लिखा है, 'किसी एक शैली में बंधे नहीं रहने वाले प्रवीण जी की कोई रंग शैली हो सकती है तो वह है फिकायतसारी। रंगी, प्रकाश, अभिनेता के जरिए कम से कम सामग्रियों में वह स्पेस को उर्जिस्वत करते हैं, जो दर्शकों पर सरस कलात्मक अनुभव के साथ तीक्ष्ण बौद्धिक प्रभाव डालता है।'

नाट्य समीक्षक संगम पांडेय कहते हैं कि उनकी 'मत्तविलास' काफी पहले देखी थी। संस्कृत नाटकों में रेटारिक की सुदीर्घ परंपरा के चलते किरदार जिस तरह बहुत प्रत्यक्ष होते हैं, वैसा उसमें नहीं था। प्रत्यक्षता का अर्थ है कि वे पात्र भीतर से नहीं बन रहे, बल्कि बाहर से बनाए जा रहे हैं। यद्यपि वह प्रस्तुति एमेच्योर अभिनेताओं के साथ तैयार की गई थी, पर उसके दोनों मुख्य पात्र काफी कन्विंसिंग थे। संस्कृत नाटकों में विदूषकत्व आम तौर पर पेटू अथवा पिछलग्गू ब्राह्मण मित्र की आसान छवियों के सिपुर्द होता है। लेकिन इस नाटक में यह दो आवारा कापालिकों के जरिए बनता है, जो उस लिहाज से किंचित मुश्किल किरदार माने जा सकते हैं। हिन्दी प्रस्तुतियों में जैसा चलन है उसे देखते हुए इस व्यंग्य नाटक के सपाट हास्य में तब्दील हो जाने की काफी गुंजाइश थी, पर शेखर ने वैसा नहीं होने दिया था। उन्होंने भूवनेश्वर की कहानी 'भेड़िए' में जिन दृश्यात्मक विधियों का इस्तेमाल किया है, वे काफी मौलिक हैं। भेड़ियों का दल एक खास लय की देहगतियों में एक दिलचस्प कोरस बन जाता है, और प्रस्तुति इसी खास दृश्य-बिंब की वजह से याद रह जाती है। देहगतियां ही नहीं, प्रकाश-संयोजन भी इस बिंब का एक अहम अवयव था। ■

कैनवस | जय त्रिपाठी

दृश्य कला परिवर्तन का विशेष अर्थ

जिस तरह जीवन परिवर्तन के साथ आगे बढ़ता रहता है, उसी तरह कला परिवर्तन की प्रक्रिया में लगातार नये-नये रूप में कैनवस पर चित्रित होती है। समकालीन कला में ऐसे कलाकार रहे हैं जो अपनी कला के परिवर्तन के लिए लड़ सकते हैं किंतु समझौता नहीं कर सकते। समय के साथ यही परिवर्तन उनकी कला का महत्वपूर्ण कारक बनता है। समकालीन भारतीय कला के मूर्धन्य कलाकारों में एक प्रो. मदन लाल नागर कला जगत में कलाकारों को परिवर्तन की कुछ ऐसी दिशा दिखा गए, जैसे कला को आकाशीय रूप की तरह प्रेक्षक निहारता रहे। एक शताब्दी पूर्व 5 जून, 1923 को पुराने लखनऊ के चौक क्षेत्र में जन्मे मदन लाल की कला में हम पाते हैं कि उनके चित्रों में एक स्पष्ट और निश्चित परिवर्तन समय-समय पर हुआ था।

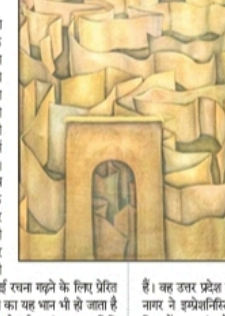

प्रो. नागर के चित्रों को देख कर समझा जा सकता है कि समकालीन भारतीय कला में उनके विचार और धारणाएं प्रयोगवादी रही हैं। उन्होंने विशेष रूप से 'स्केच' के माध्यम से अनेक रेखांकन रचे और अपने आसपास की विषयवस्तु पर ध्यान केंद्रित किया। वह लखनऊ शहर में रहे और शहर को अपनी तरह से चित्रित कर डाला। उनकी कुछ ऐसी प्रसिद्ध कृतियां रहीं जिन्हें रेखाचित्र के माध्यम में अधूरा छोड़ कर वह एक अंतराल के बाद रचते रहे। यह अंतराल कलाकार नागर के कलात्मक भाव और विचारों की रचनात्मक कला से उपजी क्रिया के बाद एक ही कलाकृति में कई तरह के अर्थ और संभावना लिए होता है। इसमें मूर्धन्य कलाकार की वह कृति भी है, जो दृश्य और भाव में समानांतर आकृति के रूप में दिखाई देती है, जो अर्थ से भरी होती है। प्रतीत होता कि यही अर्थ कलाकार को नई रचना गढ़ने के लिए प्रेरित करता है। नागर के चित्रों को देख कर समय-काल का यह भान भी हो जाता है कि रचनाकार के भावों और उनके क्रियात्मक रूप के बीच अंतराल ज्यामिति आकार लिए उनके कुछ चित्र मोटे तौर पर शहर का वर्गीकरण है।

कला जीवन के शुरुआती दिनों में प्रकृति अध्ययन उनका प्रमुख विषय था। वे मूल रूप से अलंकरण से भी प्रभावित रहे। अपने अपरंपरागत दृष्टिकोण के बावजूद उनमें संतुलन रहा। नागर स्वीकार करते थे कि अपने कुछ समय के दौरान उन्होंने लाल, नीले, पीले आदि विभिन्न चटख रंगों का प्रयोग किया। लेकिन वे समय के साथ-साथ उदात्त होते गए। उनके चित्रों का माध्यम जो भी हो वे अपने दिनों के कुछ उन चित्रकारों में एक से थे, जिन्होंने वाश तकनीकी से अलग काम किया। इस प्रयोगवादी चित्रकार ने कुछ काम इम्पस्टो तकनीकी में किए जिनमें संरचनात्मक रूपों को अच्छी तरह से परिभाषित किया गया है। तीन भाइयों में सबसे छोटे मदन लाल नागर हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार अमृतलाल नागर के भाई थे। इनके दूसरे भाई रतन लाल नागर प्रख्यात छायाकार रहे। पिता कविता, नाटक लिखने के साथ तबला वादक और शौकिया चित्रकार भी थे। पिता के निधन के समय तीनों भाई काफी छोटी उम्र के थे। मां ने तीनों को कला-संस्कृति का माहौल दिया। प्रो. नागर रेखाचित्र को रूपांकन, संरचना, लय के साथ चित्रित करते थे। उन्होंने कभी भी खुद को किसी विशेष प्रभाव के अधीन नहीं होने दिया। यही कारण रहा कि उनके चित्रों का अपना स्वरूप है। इस अवधि के दौरान उन्होंने महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि, तुलसी दास को श्रद्धांजलि जैसे कुछ ऐसे विषय चित्रित किए जो प्रायः सीधे तौर पर सामाजिक सरोकारों से जुड़े होते हैं। नागर समझते थे कि जब प्रभाव सतह पर दिखाई देते हैं, तब उनके रूपांकन उनके अपने होते हैं। उनके सपाट चित्रों में रेडेशन एक निश्चित परिप्रेक्ष्य लाता है। नागर कहते थे कि परंपरा से उनका सीधा संबंध है, लेकिन हमें परंपरा को एक विशेष अर्थ में समझना होगा। नागर के अनुसार हर कलाकार किसी न किसी परंपरा से जुड़ा होता है। उनकी बेटी अपर्णा नागर व्यास बताती हैं, बापू कहते थे, 'भले छोटे से चित्र बनाओ पर बनाओ, कभी अपने भीतर के कलाकार को मरने मत देना। कलाकार का एक तार सदैव अपने आस-पास से जुड़ा रहना चाहिए।'

1947-49 तक नागर ने मुंबई शहर में कम से कम चार दौर किए। बॉम्बे आर्ट सोसाइटी की एक प्रदर्शनी में उनके पांच चित्र प्रदर्शित किए गए लेकिन महत्वपूर्ण यह है कि मुंबई में जो कलाकार अभिव्यक्ति की एक नई शैली की तलाश कर रहे थे, उनमें नागर भी रहे। यूनियन हॉल में आयोजित कई प्रदर्शनियां नागर के बहुआयामी दृष्टिकोण को दर्शाती हैं। वह उत्तर प्रदेश के प्रतिनिधि चित्रकारों का एक संग्रह बनाने में सफल रहे। नागर ने इम्प्रेशनिस्टिक, पोस्ट इम्प्रेशनिस्टिक तथा अकादमिक शैली में कुछ मिथकों या रूपांकनों की पुनरावृत्ति भी की। उन्होंने नासिक और लखनऊ की गलियों, मंदिरों और स्मारकों को लयबद्ध संरचनात्मक सरलीकरण चित्रण से रचा। इनमें कुछ प्रसिद्ध चित्र जैसे साकार स्वप्न, गांव में सुबह, सोनार वंश, प्रतिबिंब, किसान आदि सरल संरचनात्मक अर्थ देते हैं। उत्तर प्रदेश कलाकार संघ, लखनऊ ने नागर को 1946 और 1956 में रजत पदक से नवाजा। वह प्रदेश के दूसरे और लखनऊ के पहले कलाकार रहे जिन्हें 1964 में राष्ट्रीय कला पुरस्कार से ललित कला अकादमी, नई दिल्ली ने सम्मानित किया था। प्रदेश की राज्य ललित कला अकादमी द्वारा रत्न सदस्यता से सम्मानित उत्तर प्रदेश के कला आंदोलन को आगे बढ़ाकर उसे राष्ट्रीय क्षितिज तक पहुंचाने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता। ■

दैनिक जागरण

सही क्या है, पता होना, पर उसे न करना साहस का अभाव है

परीक्षा पर प्रश्न

यह संतोषजनक तो है कि मेडिकल प्रवेश की अखिल भारतीय परीक्षा अर्थात नीट के परिणाम को लेकर जो सवाल उठे, उनका जवाब तलाशने के लिए शिक्षा मंत्रालय ने संघ लोक सेवा आयोग के पूर्व अध्यक्ष की अगुआई में चार सदस्यीय समिति गठित कर दी, लेकिन विचार इस पर भी होना चाहिए कि आखिर ये सवाल उठे ही क्यों? इस परीक्षा के मामले में एक गंभीर प्रश्न यह उठा है कि 1500 छात्रों को ग्रेस मार्क्स देना कहां तक उचित था? इन ग्रेस मार्क्स के कारण 67 छात्रों को जिस तरह पहली रैंक मिली, वह इसलिए सामान्य बात नहीं, क्योंकि पिछले वर्ष ऐसे केवल दो छात्र थे, जिन्हें शत-प्रतिशत अंक हासिल हुए थे। ग्रेस मार्क्स देने के पीछे यह दलील दी जा रही है कि इन छात्रों को परीक्षा में देरी का सामना करना पड़ा था। परीक्षा आयोजित करने वाली संस्था नेशनल टेस्टिंग एजेंसी के अनुसार ग्रेस मार्क्स तय नियमों के तहत दिए गए, लेकिन यह समझना कठिन है कि उन्हें देने में इतनी उदारता क्यों बरती गई? अगर यह कैसे मान लिया गया कि परीक्षा में देरी के कारण जो छात्र पूरे प्रश्न हल नहीं कर सके, वे यदि ऐसा करते तो उनके सभी उत्तर सही होते? यह आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है कि इस मामले की जांच करने वाली समिति अपने निष्कर्षों से छात्रों और अभिभावकों को संतुष्ट करने का कार्य करे, ताकि किसी तरह के संदेह की गुंजाइश न रहे।

नीट के मामले में इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि इसके पहले नेशनल टेस्टिंग एजेंसी को इस परीक्षा में धांधली को लेकर उठे सवालों का जवाब देना पड़ा था। ऐसा इसलिए करना पड़ा था, क्योंकि बिहार में परीक्षा में धांधली को लेकर कुछ लोगों को गिरफ्तार किया गया था। यह निराशाजनक है कि नेशनल टेस्टिंग एजेंसी अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतर पा रही है। नीट की शुचिता को लेकर उठे सवाल कितने व्यापक प्रभाव वाले हैं, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि इस परीक्षा में इस वर्ष करीब 24 लाख छात्र बैठे थे। नेशनल टेस्टिंग एजेंसी का गठन इसलिए किया गया था, ताकि परीक्षाओं में किसी तरह की गड़बड़ी न होने पाए, लेकिन वह अपनी कार्यप्रणाली से उन संस्थाओं के समक्ष कोई उदाहरण प्रस्तुत नहीं कर पा रही है, जिनकी प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र लीक होते रहते हैं और जिनके चलते लाखों छात्रों के समय और संसाधन की बर्बादी होती है। पिछले कुछ वर्षों में देश का शायद ही कोई ऐसा राज्य हो, जहां किसी न किसी परीक्षा के प्रश्नपत्र लीक न हुए हों अथवा उनमें अन्य किसी तरह की गड़बड़ी के चलते उन्हें दोबारा आयोजित न करना पड़ा हो। प्रतियोगी परीक्षाओं में धांधली एक ऐसी समस्या बन गई है, जो छात्रों के भविष्य से खिलवाड़ करने के साथ ही राष्ट्र की बदनामी का कारण भी बन रही है।

आय बढ़ाने पर जोर

उत्तराखंड सरकार का पूरा ध्यान अब विकास कार्यों की गति बढ़ाने पर है। लोकसभा चुनाव की आचार संहिता लागू होने से ढाई महीनों से अधिक विकास गतिविधियों के साथ ही राज्य की आय बढ़ाने के लिए राजस्व प्राप्ति के कार्यों में सुस्ती रही है। कर और करेतर राजस्व अधिक जुटाने के लिए पिछले दो वर्षों में लगातार प्रयास हुए हैं। इससे आय में कुछ सुधार भी हुआ है। कर प्राप्ति से जुड़े विभागों का लगातार अनुश्रवण आवश्यक है। पिछले वित्तीय वर्ष में इसी कारण कई क्षेत्रों में राजस्व बढ़ सका है। वित्तीय वर्ष 2022-23 की तुलना में वर्ष 2023-24 में राजस्व में वृद्धि 12 प्रतिशत से अधिक रहने के कारण 19,200 करोड़ से अधिक कर राजस्व मिलना संभव हुआ। एसजीएसटी के रूप में अधिक कर पाने के लिए सरकार ने कई अभिनव तरीके अपनाए। उनका सकारात्मक प्रभाव देखा गया। पिछले दो वर्षों में एसजीएसटी में लगातार वृद्धि हुई है। राज्य अपने वित्तीय संसाधनों को जितना बढ़ाएगा, विकास कार्यों पर उसका प्रभाव भी उतना ही दिखाई देगा। पिछले वित्तीय वर्ष में पूंजीगत मद में बजट खर्च में लक्ष्य से अधिक धनराशि का उपयोग होने से सरकार और संबंधित विभागों के आत्मविश्वास में वृद्धि हुई है। चालू वित्तीय वर्ष में पूंजीगत मद में बजट खर्च करने और आमदनी बढ़ाने के मोर्चे पर चुनौती अधिक है। आम चुनाव की आचार संहिता समाप्त हुई है, आने वाले कुछ महीनों में नगर निकाय चुनाव और त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव की आचार संहिता लागू होगी। ऐसे में अवस्थापना विकास पर असर न पड़े, इसे लेकर अभी से रणनीति बनाकर काम करने की आवश्यकता है। राजस्व से संबंधित खनन, परिवहन, वन, ऊर्जा, स्टांप एवं रजिस्ट्रेशन जैसे विभागों को कर प्राप्ति के उपायों को लेकर गंभीर होना पड़ेगा।

> राजस्व बढ़ाने के लिए संबंधित विभाग अपने दृष्टिकोण और कार्यप्रणाली में बदलाव करें। यह तेजी से होना चाहिए

अपनी गलतियों से भी मात खाई भाजपा ने

संजय गुप्त

इस बार भाजपा के पास ऐसा कोई मुद्दा नहीं था, जो जात-पात और क्षेत्र की राजनीति के असर को कम कर पाता

इस बार लोकसभा चुनाव नतीजों से भाजपा की उम्मीदों को करारा झटका लगा। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भाजपा ने यह मान लिया था कि वह इस बार अपने सहयोगी दलों के साथ चार सौ से अधिक सीटें हासिल करेगी, लेकिन ऐसा नहीं हो सका। जहां उसे 240 सीटें मिलीं, वहीं वह सहयोगी दलों के साथ 293 सीटों तक पहुंच गई। मोदी तीसरी बार प्रधानमंत्री बनने जा रहे हैं, लेकिन इस बार उन्हें गठबंधन सरकार का नेतृत्व करना पड़ेगा। भाजपा के कमजोर प्रदर्शन के कई कारण रहे। इनमें से एक प्रत्याशियों का चयन रहा और दूसरा भाजपा की केंद्र, राज्य और जिला इकाइयों में समन्वय की कमी। इस बार भाजपा ऐसा कोई राष्ट्रीय मुद्दा नहीं दे पाई, जो पूरे देश को आकर्षित कर पाता। पिछली बार बालाकोट एयरस्ट्राइक के कारण राष्ट्रवाद के मुद्दे ने देश की गहराई से प्रभावित किया था। इस बार ऐसा कोई मुद्दा नहीं था, जो जात-पात और क्षेत्र की राजनीति के असर को कम कर पाता। इसके कारण तमाम लोगों ने स्थानीय मुद्दों और जातीय समीकरणों को ध्यान में रखकर वोट किया। भाजपा के कमजोर प्रदर्शन में उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और हरियाणा की प्रमुख भूमिका रही। पश्चिम बंगाल में उसकी अपनी सीटें बढ़ने के बजाय घट गईं।

यदि उत्तर प्रदेश की बात की जाए तो यहां भाजपा प्रत्याशी इस उम्मीद में रहे कि इस बार भी मोदी के नाम के सहारे उनकी नैया पार लग जाएगी। यूपी में भाजपा की सोशल इंजीनियरिंग के मुकाबले सपा की सोशल इंजीनियरिंग अधिक प्रभावी रही। मौजूदा सांसदों के प्रति नाराजगी भी भाजपा के कमजोर प्रदर्शन का कारण रही। महाराष्ट्र में जोड़-तोड़ की राजनीति जनता को रास नहीं आई। क्षेत्रीय समीकरण भाजपा पर भारी पड़े। जोड़-तोड़ की राजनीति की अधिक सीमा होती है। शिवसेना और एनसीपी में टूट का लाभ इन दोनों दलों से टूटकर बने दलों को नहीं मिला। भाजपा के कमजोर प्रदर्शन के चलते उपमुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस ने इस्तीफे की पेशकश की है। देखना है वह स्वीकार होता है या नहीं? राजस्थान में कुछ समुदायों की नाराजगी और आपसी गुटबाजी भाजपा को महंगी पड़ी। यही हरियाणा में भी रहा। भाजपा इसके लिए जानी जाती है कि वह प्रत्याशियों का चयन सर्वेक्षण के आधार पर ठोक-बजाकर करती है, लेकिन इस बार बेहतर प्रत्याशियों का चयन नहीं कर सकी। लगता है उसके सर्वेक्षण एकिजट पोल सरीखे रहे। रही-सही कसर प्रत्याशियों के प्रति जनता की नाराजगी ने पूरी कर दी। एक तो मौजूदा सांसदों ने अपने-अपने क्षेत्रों में काम नहीं किया था और दूसरे पार्टी कार्यकर्ताओं से कटे-कटे रहे। पार्टी कार्यकर्ताओं की उदासीनता के साथ संघ के स्वयंसेवकों की बेरुखी भी भाजपा को भारी पड़ी। जेपी नड्डा के इस कथित बयान को संघ नेताओं और कार्यकर्ताओं की नाराजगी का कारण माना जा रहा है कि पार्टी को आरएसएस की जरूरत नहीं।

निश्चित रूप से प्रधानमंत्री मोदी ने जोरदार प्रचार किया। उन्होंने दो सौ से अधिक रैलियों और रोड शो किए, लेकिन स्थानीय मुद्दों के उभार के कारण उनकी बातों का वैसा प्रभाव नहीं पड़ा, जैसा पड़ना चाहिए था। प्रधानमंत्री मोदी ने पिछले दस साल में अनेक उल्लेखनीय कार्य किए और कोविड महामारी के बावजूद देश की आर्थिक प्रगति को बनाए रखा। इस आर्थिक प्रगति की मिसाल नहीं मिलती। अर्थव्यवस्था की बेहतरी के कारण प्रधानमंत्री 2047 तक भारत को विकसित देश और तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बनाने पर जोर देने में लगे थे, लेकिन जनता और विशेष रूप से निर्धन जनता उनकी ओर से बनाए जा रहे गैरटेव से इसलिए प्रभावित नहीं हुई कि उसे यह समझ में नहीं आया कि विकसित या तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था वाले देश में उनके लिए क्या है और इससे उन्हें क्या हासिल होने जा रहा है? उन्हें शिक्षा और स्वास्थ्य के मोर्चे पर अनेक खामियां दिख रही थीं। निर्धन तबका महंगाई और बेरोजगारी से भी त्रस्त था। यह अपने निकट भविष्य के बारे में अधिक चिंता करता है। इसीलिए वह विकसित भारत के नारे से खुद को जोड़ नहीं सका। उसे लगा कि यह नारा तो अमीर और साक्षम वर्ग के हितों को अधिक पूरा करने वाला है।

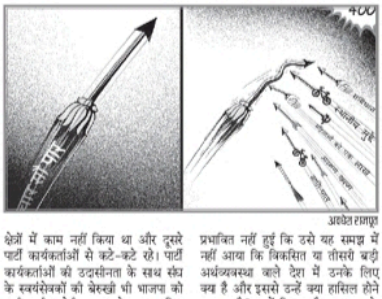

अवधेश राजपूत

भाजपा ने इस बार अपने घोषणापत्र में ऐसी कोई घोषणा नहीं की, जो निर्धन तबके को आकर्षित कर पाती। पिछली बार उसने ऐसी अनेक घोषणाएं की थीं। जहां भाजपा खेड़ी संस्कृति से दूर रही, वहीं कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों ने अनेक लोकलुभावन घोषणाएं कीं, जिनसे निर्धन वर्ग उनकी ओर आकर्षित हुआ। कांग्रेस की इस घोषणा ने खासा असर डाला कि उसकी सरकार बनी तो गरीब परिवारों की महिलाओं को हर साल खटाखट एक लाख रुपये सलाना मिलेंगे। विपक्षी दलों और खासकर कांग्रेस ने भाजपा के चार सौ पार नारे का उल्लेख करते हुए यह झूठा प्रचार भी किया कि अगर भाजपा और सहयोगी दलों को इतनी सीटें मिल गईं तो वह संविधान और आरक्षण खत्म कर देगी। इसका असर एससी, एसटी और ओबीसी वर्गों पर पड़ा और उन्होंने भाजपा के विरोध में वोट किया।

प्रधानमंत्री मोदी ने देश को विकसित बनाने का जो गैरटेव खड़ा किया, उसका हश्र बाजपेयी सरकार के 'इंडिया शाइनिंग' नारे जैसा हुआ। इस गैरटेव से निर्धन तबका प्रभावित नहीं हुआ और इसके दुष्परिणाम भाजपा को उठाने पड़े। इस सबके बावजूद भाजपा सबसे बड़े दल के रूप में उभरी है। यह यही बताता है कि मोदी का देश की जनता पर अभी भी प्रभाव है और वह उन्हें एक सशक्त नेता के रूप में देखती है। कांग्रेस कुछ भी दावा करे, वह भाजपा की 240 सीटों के मुकाबले 99 सीटें ही हासिल कर सकी हैं। चूंकि भाजपा ने सहयोगी दलों के साथ आसानी से बहुमत हासिल कर लिया है, इसीलिए नरेन्द्र मोदी तीसरी बार सरकार चला रहे हैं। वह गुजरात के मुख्यमंत्री और भारत के प्रधानमंत्री के रूप में गत 23 साल से बहुमत की सरकार चला रहे हैं। इस बार गठबंधन की सरकार चलाना उनके लिए नया अनुभव होगा। चूंकि वह एक कुशल नेता हैं, इसलिए उनके लिए घटक दलों के साथ मिलकर सरकार चलाना कठिन नहीं होगा, पर घटक दलों को भी देखना होगा कि वे अपने राजनीतिक हितों के लिए दबाव की राजनीति न करें और देश को आगे ले जाने में भाजपा के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलें।

response@jagran.com

ठंडक पाने की जुगत में राजनीतिक दल

हास्य-व्यंग्य

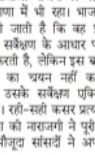

सूर्यकुमार पांडेय

सत्ता का एयर कंडीशनर विचारधाराओं की गर्मी को पलभर में दूर कर देने की क्षमता रखता है

चुनावी गर्मी ठंडी पड़ चुकी है। जीतने वालों की बल्ले-बल्ले और हारने वालों की गल्ले-गल्ले हो चुकी है। सत्य यह है कि जो बहुमत पा गया, उसने सरकार बना ली, मगर पराजित हो चुके दलों के धर्माधीटरों का पारा अब भी ऊपर-नीचे हो रहा है। उनकी राजनीति के शेयर बाजार में गिरावट पूर्ववत जारी है। एक पुरानी पार्टी तो सत्ता को अपनी जागीर समझती थी। अब उसका हाल उस मिलावटी मिल्क की तरह हो गया है, जिसमें जरा-सी आंच लगते ही भयंकर उबाल आने लगता है। किसी जमाने में यह पार्टी लकदक सफेद दूध की तरह हुआ करती थी। धीरे-धीरे गर्म होती थी। हौले-हौले उफान आता था, लेकिन ज्यों ही आलाकमान की ब्राल्टी के पानी की दो-चार छींटें पड़ती थीं, उफनना बंद हो जाता था। उसके नेताओं के कपड़े भी तब शुद्ध दूध जैसे सफेद होते थे। मलाई की चिकनाई उन पर दूर से ही झलका करती थी।

तब राजनीति में इतना प्रदूषण नहीं था। हर दूध की अपनी पहचान हुआ करती थी। गाय और भैंस के दूध अलग-अलग हुआ करते थे। गायों पर सबका समान अधिकार था। एक पार्टी उसे अपना चुनाव चिह्न बनाती थी, दूसरी गौरक्षा का सवाल खड़ा करती थी। उस समय बछड़ों के पीने के बावजूद भी इतना दूध बच जाता था कि दूध-दही पीने और पिलाने वाले, दोनों प्रसन्न रहते थे। तब लोगों के पास आय से अधिक संपत्ति नहीं हुआ करती थी। तब दुहने वाले कम थे, पीने वाले ज्यादा थे। आज दैहन-कर्म करने वाले ही सारा दूध गटक जाते हैं। वह भी ऐसा खुलेआम थन में मुंह लगाकर करते हैं। विकास की ब्राल्टियों तक इस दूध की दो-चार बूंदें ही आ पाती हैं। पानी का रंग भी तब साफ था। अगर दूध में गलती से थोड़ी-बहुत मिलावट भी हो जाया करती थी तो किसी को सेंदेह नहीं होता था और किसी तरह की पहचान नहीं हो पाती थी। दूध का दूध और पानी का पानी करने की नौबत नहीं आती थी। अब छालमेल का जमाना है। दूध में पड़ी हुई मक्खी को बाहर निकाल कर फूलने का युग है।

यह कठिन समय है। गंदले पानी में भी दूध मिलाकर बेचा जाए, तब भी उसे शुद्ध दूध समझ कर पी लेने में किसी को कोई एतराज नहीं है। हमारा लोकतंत्र सिंथेटिक दूध का पर्यायवाची है। उसे पता है कि शुद्धता के जमाने गए। सेकर प्रजातियां उगाने की होड़ है। जैसा अन्न, वैसा मन। यह विशुद्ध गठबंधन की राजनीति का समय है। एक ही बरतन में कई तरह के दूध-पानी रखे जाते हैं। गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊंटनी इनके दूध ही नहीं, कद तक एक जैसे दिखने लगे हैं। यह विसंगतियों का दौर है। पहले चारे के समर्थन से शुद्ध दूध तैयार होता था, अब दूध के सहयोग से चारा तैयार किया जाता है और सामने वाले के आगे डाला जाता है। अब जेलें भी हमारे राजनेताओं के लिए तीर्थ स्थलों की तरह होती जा रही हैं। कुछ जा चुके हैं। कुछ जाने वाले हैं। कुछ जाते-जाते रह गए हैं। पहले के नेता देश के लिए जेल जाते थे, अब परिवारवादी प्रतिष्ठा के नाम पर जाते हैं। यह परिवार प्रेम हमारे देश की सिद्धस्त की समृद्ध परंपरा का अभिन्न अंग है।

हां, तो बात राजनीति के तापमान की चल रही थी। कुछ दलों का पारा हाई हो गया है और कुछ पार्टियों का पूरा शरीर ठंडा पड़ता जा रहा है। मगर ऊपर की गर्मी बरकरार है। पहले हथेली गर्म थी, अब मत्था गर्म है। कई चोट खाए हुए दलों के नेताओं को अब भी इस बात का इंतजार है कि शायद कोई असंतुष्ट चिकित्सक आकर उनके घावों पर मरहम लगा देगा और वे चलने-फिरने के लायक हो जाएंगे। चुनाव के नतीजे आने के बाद जिन दलों का बाहर का जोश ठंडा पड़ चुका था, अब उनके भीतर की गर्मी बढ़ रही है। ऐसे लोग सत्ता का कोल्ड ड्रिंक पीने की जुगाड़ में लग गए हैं। सत्ता का एयर कंडीशनर सिद्धांतों-विचारधाराओं के तापमान को पल भर में कूल-कूल बना देने की क्षमता रखता है।

response@jagran.com

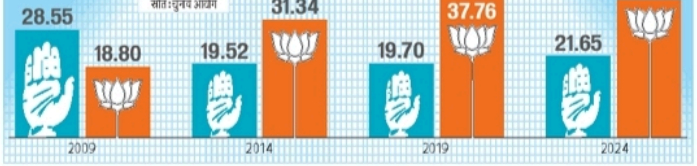

ऊर्जा

कृपा को अवसर दीजिए

ईश्वर व्यक्ति को अपने आपको और समाज को समझने के दो अवसर देता है। जीवन इसी धुरी के दो किनारों के बीच चलता है। महत्व इसका कदापि नहीं है कि हम किसी का हित कर रहे हैं। हमें यह समझना होगा कि समाज ने अपने निज हित की कौन-सी परिभाषा बनाई है। व्यक्ति के जीवन में हित की केवल एक ही परिभाषा होती है। और वह है उसका अपना स्वार्थ। उसका अपना न कोई भगवान होता है, न धर्म और न ही गुरु। जब उसका स्वार्थ पूरा हो गया तो वह उसी स्वार्थ पूर्ति को धर्म, ईश्वर और गुरु से जोड़कर कुछ काल तक लोगों के बीच अपने आपको दूसरों की तुलना में श्रेष्ठ कहलाकर अपने अहंकार का पोषण करके संतुष्ट रहता है। किंतु जो व्यक्ति अपने श्रेष्ठ कर्तव्य को ही ईश्वर की पूजा और अपनी साधना मानता है वह कर्म में सुख लेता है, कर्म के परिणाम में नहीं। समुद्र में जल बढ़ने लगे तो अपनी धारणाओं के टापुओं को सजाने-संभालने के स्थान पर नावों को संभालना शुरू कर देना चाहिए, जो क्षणिक अभिमान और अवसरवादिता के ऊपर चलकर अपने लक्ष्य को प्राप्त करती हैं।

भूख और प्यास केवल शरीर के संदर्भ में ही नहीं, इनका संबंध मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार तथा इंद्रियों तथा वृत्तियों तक से भी है। साधक को इसके लिए गहन शांत और स्थिर होना पड़ता है। चोरों के ऊपर घर छोड़कर भाग जाने से कोई बहुत बहादुरी का प्रमाणपत्र नहीं मिल जाता है कि देखो कितने त्यागी हैं कि सबकुछ छोड़कर घर से निकल गए, अपितु घर से पलायन करने पर चोरी करने आए चोर और समाज के लोग उपहास करते हैं।

चरित्र के पास पुरुषार्थ की नाव, धैर्य की भूमि और ईश्वर की कृपा की अनुकूल वायु होती है, जो घोर प्रतिकूलता में भी हमारे पुरुषार्थ को कृपा का बल देकर जीवन के परम लक्ष्य तक पहुंचने में सहायक करती है। हमें अपने अटूट विश्वास द्वारा ईश्वर की कृपा को अवसर देना चाहिए।

स्वामी मैथिलीशरण

बर्फ को पिघलने से रोकेंगे वायरस

मृदुल व्यास

विज्ञानियों ने ऐसे वायरस का पता लगाया है, जो आर्कटिक की बर्फ के पिघलने को नियंत्रित कर सकते हैं

वायरस शब्द हमारे मन में खौफ पैदा करता है, लेकिन सभी वायरस खौफनाक नहीं होते। इनकी दूसरी भूमिकाएं भी हो सकती हैं। विज्ञानियों ने ग्रीनलैंड की बर्फ पर ऐसे विशाल वायरसों की मौजूदगी का पता लगाया है, जो बर्फ के शैवाल को संक्रमित करके आर्कटिक की बर्फ के काले होने और पिघलने को नियंत्रित कर सकते हैं। इन वायरसों को कोरी आंख से नहीं देखा जा सकता। विज्ञानियों का कहना है कि इन वायरसों का उपयोग करके बर्फ के पिघलने की गति को धीमा किया जा सकता है। इससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को रोकने के लिए एक नया रास्ता मिल सकता है।

हर वर्ष में आर्कटिक की बर्फ के पिघलने पर जीव-जंतु और काले शैवाल सक्रिय हो जाते हैं। शैवाल के सक्रिय होने से बर्फ पिघलने की गति बढ़ जाती है। विज्ञानियों का कहना है कि बर्फ के तेजी से पिघलने से होने वाली समस्याओं से निपटने के लिए ये वायरस प्राकृतिक समाधान प्रदान करते हैं। आर्कटिक में महीनों के अंधेरे के बाद हर वर्ष में जब सूरज उगता है, तो जीवन वापस आ जाता है। छुईमुई भाल अपनी सर्दियों की मांद से बाहर निकलते हैं। आर्कटिक टर्न नामक पक्षी अपनी लंबी यात्रा के लिए दक्षिण की ओर उड़ते हैं और कस्तूरी बैल उत्तर की ओर बढ़ते हैं। जानवर ही एकमात्र ऐसे जीव नहीं हैं, जो वर्ष के सूरज से फिर से जागृत होते हैं। बर्फ पर निष्क्रिय पड़े शैवाल वर्ष में खिलने लगते हैं और बर्फ के बड़े क्षेत्रों को काला कर देते हैं। जब बर्फ काली हो जाती है तो सूरज की रोशनी को परावर्तित करने की इसकी क्षमता कम हो जाती है। इससे बर्फ पिघलने की प्रक्रिया में तेजी आती है जिससे ग्लोबल वार्मिंग और भी बढ़ जाती है।

डेनमार्क के आहस विश्वविद्यालय में पर्यावरण विज्ञानी लारा पेरीनी का कहना है कि ये वायरस आम तौर पर बैक्टीरिया से बहुत छोटे होते हैं। सामान्य वायरस का आकार 20-200 नैनोमीटर होता है, जबकि सामान्य बैक्टीरिया का आकार दो-तीन माइक्रोमीटर होता है। दूसरे शब्दों में सामान्य वायरस बैक्टीरिया से लगभग 1000 गुना छोटा होता है। हालांकि विशाल वायरस के मामले में ऐसा नहीं है। विशाल वायरस 2.5 माइक्रोमीटर के आकार तक बढ़ते हैं। विशाल वायरस ज्यादातर बैक्टीरिया से बड़े होते हैं। आनुवंशिक जटिलता के हिसाब से ये वायरस बहुत अनेखे हैं। विशाल वायरस की खोज सबसे पहले 1981 में समुद्र में हुई थी। ये वायरस समुद्र में हरे शैवाल की संक्रमित करने में माहिर थे। बाद में विशाल वायरस जमीन पर मिट्टी में और यहां तक कि इंसानों में भी पाए गए, लेकिन यह पहला अवसर है जब विशाल वायरस सतह की बर्फ और सूक्ष्म शैवाल से भरी बर्फ पर जीवित पाए गए हैं।

(लेखक विज्ञान के जानकार हैं)

राजरंग

नेताजी फोन पर हैं

नई सरकार के गठन की तैयारियों के बीच सबसे अधिक चर्चा इस बात को लेकर है कि राजग सरकार में किस-किस को जगह मिल रही है। यानी कौन-कौन मंत्री बन रहा है। फिलहाल इस दौड़ में शामिल सभी संभावित चेहरों ने दिल्ली में डेरा डाल रखा है। सभी को अब इस खुशखबरी वाले फोन काल का इंतजार है। यही वजह है कि अमूमन फोन काल को अनदेखा करने वाले नेताजी हर फोन काल को लपक कर रिसीव कर रहे हैं। फोन के नेटवर्क और बैट्री को बराबर चेक करना नहीं भूल रहे हैं। यह बात अलग है कि इसके चक्कर में उन्हें मार्केटिंग वाले फोन काल भी सुनने पड़ रहे हैं। देखना दिलचस्प होगा कि उनके फोन पर खुशखबरी वाली घंटी बजती है या फिर टेली मार्केटिंग वाले काल रिसीव करने की निराशा ही हाथ लगती है। इस तरह फोन से चिपक कर रहना उनके लिए किसी तपस्या से कम नहीं है।

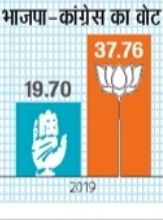

कृषि भवन 'लक'

कृषि मंत्रालय और कृषि भवन इस बार के लोकसभा चुनाव में कई नेताओं के लिए बहुत शुभ साबित नहीं हुए। वर्तमान कृषि मंत्री अर्जुन मुंडा और कृषि राज्य मंत्री कैलाश चौधरी दोनों ही चुनाव हार गए। मुंडा से पहले नरेन्द्र सिंह तोमर को भी कृषि मंत्री का पद छोड़ना पड़ा था और अब वह मध्य प्रदेश में मंत्री हैं। कृषि भवन स्थित उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के दोनों राज्य मंत्रियों का भी यही हाल है। साध्वी निरंजन ज्योति जहां चुनाव हार गईं तो अश्विनी चौबे का टिकट ही कट गया। जबकि चौबे से अधिक उम्र के नेताओं को चुनाव लड़ने का मौका दिया गया। हालांकि पीयूष गोयल के लिए कृषि भवन लकी जरूर रहा, लेकिन कानाफूसी यही है कि उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के साथ वाणिज्य मंत्रालय के भवन का उनका दफ्तर इसमें लकी चार्म रहा। मगर हकीकत यह भी है कि ग्रामीण विकास मंत्रालय के मंत्री गिरिराज सिंह चुनाव जीत गए, जिनका दफ्तर कृषि भवन में ही है। ऐसे में लक फैक्टर भवन नहीं, बल्कि नेताओं की अपनी लोकप्रियता हार-जीत की असल कसौटी है।

हिट विकेट

कई बार ज्यादा और पहले बोलने के चक्कर में लोग अपना ही केस बिगाड़ लेते हैं। इसका नमूना पिछले दिनों शीर्ष अदालत में चल रही एक सुनवाई में देखने को मिला। कोर्ट याचिका में की गई प्रार्थना स्वीकार करने को तैयार था। यानी फैसला याचिकाकर्ता के पक्ष में आने वाला था, लेकिन याचिकाकर्ता की ओर से पेश वकील ने कोर्ट से मामले की सुनवाई स्थगित करने का अनुरोध किया। पीठ की अगुआई कर रहे न्यायाधीश ने वकील से कहा कि हम आपके साथ हैं, फिर भी आप बीच में दखल दे रहे हैं। वकील ने स्थगन मांगते हुए कहा कि उसे कुछ और निर्देश लेने हैं। तब पीठ में बैठे दूसरे न्यायाधीश ने टिप्पणी कि यह हिट विकेट का मामला है। संदेश साफ है कि अपनी बात कहने से पहले सामने वाले की सुनें, नहीं तो ज्यादा स्मार्ट बनने के चक्कर में हिट विकेट हो जाएंगे।

भविष्यवाणी का मतलब

प्रशांत किशोर यानी पीके अब किसी पार्टी का कभी भविष्य नहीं बताएंगे। इस बार उनकी भविष्यवाणी उल्टी पड़ गई है तो आगे अब इस काम से तौबा करने का एलान कर दिया है। पहले दावा करते थे कि मेरा कहा यदि गलत होगा तो राजनीति से संन्यास ले लूंगा। सच में ऐसी जरूरत कभी नहीं आई तो उनका उत्साह बढ़ने लगा। उनकी ताबड़-तोड़ कई भविष्यवाणियां सही साबित हुईं। बड़े चुनावी रणनीतिकार के रूप में नाम के साथ ही कुछ दाम भी इकट्ठा हो गया। तब दूसरों के लिए काम करने के बजाय खुद की राजनीति में नई भूमिका की तलाश में जुट गए। बिहार में अपनी संभावित पार्टी के लिए जमीन तैयार करने में जुट गए। फिर भी चुनावी सर्वेक्षणों का मोह नहीं छोड़ पाए और भविष्यवाणी कर डाली कि भाजपा इस लोकसभा चुनाव में पिछली बार से भी ज्यादा सीटें जीतने जा रही है। राहुल गांधी और कांग्रेस के अंत की घोषणा कर दी, पर अब जब नतीजा आया है तो पीके बुरी तरह गलत साबित हुए हैं। सवाल उठने लगे हैं कि पीके ने ऐसा क्यों किया? पीके को इसका जवाब देने नहीं बन रहा तो फिलहाल बचने के लिए वह इस संघे से तौबा करने में ही भलाई समझ रहे।

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63, नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक के प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

निवेश के लिए जब जागो, तभी सवेरा

रिटायरमेंट प्लानिंग में हो गई है देर, तो घबराएं नहीं, प्लान बनाएं

आप सही ढंग से योजना बनाकर चलेंगे, तो देर से शुरूआत करने के बावजूद रिटायरमेंट के लिए पर्याप्त कॉर्पस बना सकते हैं। अगले दस साल में आपकी आमदनी में जो भी बढ़ोतरी होती है, उसे अगर आप एसआईपी को स्टेप-अप करके निवेश करते रहेंगे, तो आप अपने रिटायरमेंट फंड को और भी बेहतर बना सकते हैं। हमने रिटायरमेंट कॉर्पस का अनुमान 8 फीसदी के सालाना रिटर्न के आधार पर लगाया है, जो फिक्स्ड रिटर्न वाले एसेट्स में निवेश पर आधारित है। अगर आप इसका एक हिस्सा इक्विटी फंड में लगा देते हैं, तो महंगाई को मात दे पाएंगे। हर महीने 35 हजार रुपयों का निवेश करने के लिए हो सकता है आपको अपने खर्चों में कुछ कटौती करनी पड़े, लेकिन रिटायरमेंट के बाद सुरक्षित और आरामदेह जिंदगी बिताने के लिए ऐसा करना जरूरी है।

निवेश मंत्रा
विनोद कौशिक

अगर आप भी अपने रिटायरमेंट की प्लानिंग कर रहे हैं तो घबराना नहीं चाहिए। क्योंकि कहा गया है कि निवेश के लिए कोई देरी नहीं 'जब जागो, तभी सवेरा' होता है। अगर आपने भी रिटायरमेंट की प्लानिंग में देर कर दी है और अब घबरा रहे हैं कि जब अगले कुछ वर्षों में हर महीने वेतन मिलना बंद हो जाएगा तो आपका खर्च कैसे चलेगा? ये बात सही है कि रिटायरमेंट के लिए बचत और निवेश का काम जितनी जल्दी शुरू कर दिया जाए, उतना ही अच्छा रहता है। इसमें न सिर्फ आपको ज्यादा पैसे जमा करने का वक्त मिलता है, बल्कि आपको निवेश की नई स्कीम भी कंपाउंडिंग की मदद से तेजी बढ़ती रहती है, लेकिन अगर आप किसी भी वजह से ऐसा नहीं कर पाए, तो अब फिक्र पछताने से कुछ नहीं होगा। इसके लिए जरूर तैयारी करें और लक्ष्य तय कर निवेश करके से आप बड़ी आसानी से कुछ दिनों में अपनी रिटायरमेंट प्लानिंग को बेहतर बना सकते हैं।

सिर्फ 33 प्रतिशत ही कर पाते हैं प्लानिंग

वैसे रिटायरमेंट की तैयारी में देर करने वाले आप अकेले नहीं हैं। एक सर्वे के मुताबिक भारत के सिर्फ 33% कामकाजी लोग ही रिटायरमेंट के लिए पर्याप्त बचत और निवेश करते हैं, लेकिन अब इन बात पर अफसोस करने की बजाय, समझदारी इसमें है कि 'जब जागो, तभी सवेरा' वाली कहावत पर अमल करते हुए आगे की ओर देखें और अपने रिटायरमेंट के लिए फौरन बचत और निवेश करना शुरू कर दें, ताकि वक्त रहते पर्याप्त रिटायरमेंट फंड जा कर सके। तो आइए समझते हैं कि वह जरूरी काम देर से शुरू करने वालों को रिटायरमेंट की तैयारी के लिए बचत और निवेश की कौन सी रणनीति अपनानी चाहिए। इसके लिए आपको सही योजना पर स्टेप-बाय-स्टेप अमल करना होगा।

मौजूदा खर्च का हिसाब लगाएं

सबसे पहले यह चेक करें कि आपका हर महीने का खर्च यानी आर्थिक जरूरतें क्या और कितनी हैं। इसके लिए खाने-पीने, कपड़े, बिजली, इंटरनेट, दवाओं और स्वास्थ्य ट्रांसपोर्ट समेत हर तरह के रेगुलर खर्च का हिसाब लगाने के साथ ही घर के रख-रखाव और जरूरी साज़ो-सामान का बजट भी बनाएं। हर तरह के मौजूदा खर्च को जोड़कर आपको हर महीने का बजट निकल आएगा। यह भी ध्यान में रखें कि रिटायरमेंट के बाद अगर आपके कुछ खर्च कम होंगे, तो उन बढ़ने के कारण मेडिकल ट्रीटमेंट का खर्च बढ़ भी सकता है।

भविष्य के खर्च का अनुमान

अपने मौजूदा बजट को जोड़ने के बाद उसी आधार पर आपको अपने रिटायरमेंट के बाद की जरूरतों का अनुमान लगाना होगा। इसके लिए आपको अपने मौजूदा खर्च को इंफ्लेशन वाली महंगाई दर के हिसाब से एडजस्ट करके जोड़कर भविष्य की लागत का कैलकुलेशन करना होगा। मिसाल के तौर पर अगर अभी आपका महीने का खर्च 50 हजार रुपये आ रहा है और सालाना महंगाई दर 6 फीसदी रहने का अनुमान है, तो 10 साल बाद आपको उतनी ही चीजों के लिए करीब 90 हजार रुपयों की जरूरत पड़ेगी।

इमरजेंसी फंड का अंदाजा लगाएं

रेगुलर खर्चों का अनुमान लगाने के बाद आपको अपने करीब 6 महीने के खर्च के बराबर रकम इमरजेंसी फंड के तौर पर भी रखनी होगी। यह रकम आप किसी ऐसे इंस्ट्रूमेंट में निवेश कर सकते हैं, जिसे कम समय में निकाला जा सकता है। इस रकम को आप बैंक के स्टॉट टर्म एफडी, लिक्विड फंड्स, डेट म्यूचुअल फंड जैसे एसेट्स में बांटकर रख सकते हैं। अगर आपका महीने का खर्च 90 हजार रुपये आता है, तो आपको इमरजेंसी फंड के रूप में करीब 5.5 लाख रुपये रखने होंगे।

कितना रखें रिटायरमेंट कॉर्पस

अपने मंथली बजट का अनुमान लगाने के बाद आपको यह कैलकुलेट करना होगा कि हर महीने इतनी रेगुलर इनकम के लिए आपको कितने बड़े रिटायरमेंट कॉर्पस की जरूरत होगी। अगर आपका रिटायरमेंट के बाद का हर महीने का खर्च 90 हजार रुपये आता है, तो इतनी रेगुलर इनकम के लिए आपको 8 फीसदी रिटर्न के हिसाब से करीब 2.14 करोड़ रुपयों के रिटायरमेंट कॉर्पस की जरूरत पड़ेगी। इसमें इमरजेंसी फंड को भी जोड़ दें तो यह रकम करीब 2.20 करोड़ रुपये निकलती है।

हर महीने कितना करना होगा निवेश

10 साल में करीब 1.70 करोड़ रुपये का कॉर्पस जमा करने के लिए आप इन रणनीति पर अमल कर सकते हैं। आपकी मौजूदा 50 लाख रुपये की बचत को अगर फिक्स्ड रिटर्न वाले इंस्ट्रूमेंट्स में लगाते हैं, जहां करीब 8 फीसदी सालाना रिटर्न मिलता है, तो 10 साल में यह रकम करीब 1.07 करोड़ रुपये हो जाएगी। इसके अलावा अगर आप हर महीने 35 हजार रुपये एसआईपी के रूप में निवेश करते हैं, तो 10 फीसदी के सालाना कंजर्वेटिव रिटर्न के हिसाब से 72 लाख रुपये का कॉर्पस जमा हो जाएगा। सालाना रिटर्न अगर 12 फीसदी रहा, तो आप करीब 81 लाख रुपये का रिटायरमेंट कॉर्पस जमा कर पाएंगे। एसआईपी पर इतना औसत रिटर्न पाने के लिए आपको अग्रेसिव निवेश इंक्लूजनस्पस और फ्लेक्सी इक्विटी फंड में करना होगा। इंक्लूजनस्पस में निवेश पर आप टैक्स की बचत भी कर पाएंगे। अगर आप अपनी मौजूदा 50 लाख रुपये की बचत फिक्स्ड रिटर्न वाले एसेट्स में लगाते हैं, तो आपका रिस्क भी बैलेंस हो जाएगा।

घर की 'लक्ष्मी' बचत में पुरुषों से कई गुना आगे

बचत
बिजनेस डेस्क

- कंजूस पति से भी खींच लेती हैं पैसा और कर देती है निवेश
- बाजार में मोलभाव करने में भी महिलाओं का कोई सानी नहीं
- महिलाएं अक्सर कम जोखिम वाले निवेश को देती प्राथमिकता
- लांग टर्म के लिए निवेश करने में सक्षम, कर रहीं मालामाल
- घर का बजट संभालना भी महिलाओं के बाएं हाथ का खेल

महिलाएं (मां, बहन, बेटी और पत्नी) यानी घर की 'लक्ष्मी' हर काम में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही हैं। चाहे वह कोई भी क्षेत्र हो। हर मामले में महिलाएं कहीं भी पीछे नहीं दिखती। भारतीय संस्कृति में भी महिलाओं को घर की 'लक्ष्मी' कहा जाता है। वैसे तो इसके पीछे कई तर्क दिए जाते हैं, लेकिन अगर हम निवेश और बचत के नजरिये से देखें तो भी यह बात सोलह आने सच ही नजर आती है। महिलाओं के कई ऐसे गुण हैं, जिनमें वे पुरुषों से कहीं उन्नीस नहीं ठहरती। बात चाहे बचत करने की हो या फिर मोलभाव करने की, उनका कोई सानी नहीं है। महिलाएं अक्सर बाजार में भी पुरुषों से कम दामों में सामान खरीदने की क्षमता रखती हैं। महिलाएं घर का बजट बनाने में भी पुरुषों से कहीं आगे हैं। कहा जाता है कि घर महिलाओं से स्वर्ग बनता है। वह घर के हर व्यक्ति की पसंद नापसंद और अच्छे बुरे का ख्याल रखती हैं। बात जब बचत की आती है तो महिलाएं अक्सर अपने कंजूस पति से भी पैसे खींच लेती हैं। इस पैसे को बचाकर रखती हैं। पहले तो महिलाएं अक्सर इस पैसे को गुल्लक या अपने संदूक में रखती थी, लेकिन आज की महिला पहले के मुकाबले काफी जागरुक है। इस महिलाएं पैसे बैंक में एफडी के रूप में, किसी को ब्याज पर देकर या म्यूचुअल फंड में भी निवेश कर रही हैं। इसके अलावा भी निवेश के कई विकल्प मौजूद हैं। महिलाएं अक्सर कम जोखिम वाले निवेश को प्राथमिकता देती हैं। वे लांग टर्म के लिए निवेश करने में सक्षम हैं। इस रिपोर्ट में हम आपको बताएंगे कि महिलाएं निवेश या बचत के मामले में पुरुष से क्यों बेहतर हैं।

लंबा जीवन-लंबा निवेश

महिलाओं को लेकर विश्व स्वास्थ्य सांख्यिकी की रिपोर्ट बताती है कि भारत में औसत जीवनकाल 70.8 वर्ष का होता है, जबकि महिलाओं का जीवनकाल पुरुषों की तुलना में 2.7 साल ज्यादा होता है। यह आंकड़े साफ बताते हैं कि महिलाओं को रिटायरमेंट के बाद ज्यादा फंड की जरूरत होगी और वे लांग टर्म के लिए ज्यादा निवेश भी कर सकती हैं। चूंकि, उनके सामने समय भी ज्यादा रहता है तो लांग टर्म का रिटर्न भी अधिक होगा।

कमाई कम, लेकिन ज्यादा बचत

भारत में महिला-पुरुष के बीच कमाई का अंतर भी ज्यादा है। एक ऑफिशियल आंकड़े के मुताबिक, महिलाओं को देश में पुरुषों के मुकाबले समान काम के लिए 21 फीसदी कम वेतन मिलता है। यानी उनकी कमाई पुरुषों के मुकाबले कम हो जाती तो उन्हें अपने खर्च करने की आदत भी कम रहती है। इंडीविजुअल मोलभाव में महिलाओं को अव्वल माना जाता है और वे किसी उत्पाद के पुरुषों के मुकाबले कम कीमत देती हैं।

महिलाएं ऐसे करती हैं निवेश

महिलाओं को कम जोखिम उठाने वाला निवेशक माना जाता है। ज्यादातर महिलाएं अपने पैसे कम जोखिम वाले विकल्पों में ही लगाती हैं। उनके ज्यादातर पैसे एफडी और अन्य सरकारी बचत योजनाओं में लगते हैं, जबकि रियल एस्टेट और शेयर बाजार जैसे जोखिम वाले रास्तों से वे दूर रहती हैं। जाहिर है उन्हें कम रिटर्न भी मिलता होगा, जिससे उनके अंदर ज्यादा बचत की आदत और बढ़ती जाती है।

जिम्मेदारी निभाने में भी महिलाएं आगे

परिवार चलाने की जिम्मेदारी ज्यादातर महिलाओं पर होती है। घर के हर सामान और हर व्यक्ति का ख्याल रखना उन्हें काफी जिम्मेदार बनाती हैं। यही बात धीरे-धीरे उनमें बचत की आदत भी पैदा करती है। महिलाएं अपने निवेश और बचत के प्रति पुरुषों से कहीं ज्यादा जिम्मेदार होती हैं। यही कारण है कि वे हमेशा जोखिम वाले विकल्पों से दूर रहना पसंद करती हैं।

प्राथमिकता तय करने में आगे

घर का बजट संभालना महिलाओं के बांए हाथ का खेल होता है। जाहिर है कि वे निवेश का बजट भी बेहतर बना लेती हैं और लांग टर्म के लिए पैसे लगाने में कम जोखिम के साथ ज्यादा रिटर्न कमा सकती हैं। उनका ध्यान भी अपने निवेश और बचत पर ज्यादा केंद्रित रहता है।

छोटे शेयर दे सकते हैं बड़ा मुनाफा, तो फिर क्यों घबराना

छोटे शेयरों ने पिछले वर्षों में जबरदस्त रिटर्न दिया

आपकी पूंजी कछुआ चाल से बढ़ेगी लेकिन डूबेगी नहीं

थोड़े से लॉन्ग टर्म में आपको अच्छा मुनाफा दे जाएगी

सरकार चाहे किसी की भी रहे इक्विटी अच्छा ग्रोथ देगी

बिजनेस डेस्क

यदि आप निवेश करने जा रहे हैं या निवेशक हैं और आपके पास कम पूंजी है तो निवेश करने से घबराएं नहीं। चूंकि इस समय जो छोटे शेयर हैं, एक दिन वे भी बड़ा मुनाफा दे सकते हैं। इसलिए घबराएं नहीं और अपने लक्ष्य तय कर सही दिशा में निवेश करें। इससे आपकी पूंजी कछुआ चाल से बढ़ेगी, लेकिन डूबेगी नहीं और थोड़े से लॉन्ग टर्म में अच्छा मुनाफा दे जाएगी। अक्सर कहा भी जाता है कि सहज पके सो मीठा होय। इसलिए आप अपने गोल तय कर निवेश करें। निवेश चाहे छोटा हो या बड़ा लेकिन उसे रोकें नहीं। इस समय जो छोटे शेयर हैं, यानी कम कीमत पर हैं। उनकी कंपनी की प्रोफाइल और मार्केट कैप देखकर निवेश करें। चाहें तो एसआईपी के जरिये भी निवेश कर सकते हैं। लेकिन निवेश का लक्ष्य लंबा लेकर चलें। इससे आपको कंपाउंडिंग का भी लाभ मिलता है और आपकी पूंजी बिना किसी रिस्क के बढ़ती जाती है। शेयर मार्केट के दिग्गजों का भी कहना है कि आने वाले कुछ दिन बाजार के लिए बहुत बेहतर नहीं रहने वाले हैं। बाजार काफी नर्वस रहेगा। हालांकि, इस उथल-पुथल के बीच उन्होंने स्मॉल कैप के शेयरों में निवेश की सलाह दी है। उनका कहना है कि ये शेयर बहुत ज्यादा नीचे नहीं जाएंगे। अच्छे स्मॉल कैप शेयर में अगर बहुत गिरावट भी हुई तो भी 20-30 फीसदी से ज्यादा नहीं होगी। लार्ज कैप शेयर अर्थव्यवस्था के साइज के लिहाज से काफी बड़े हैं। ये नुकसान करवा सकते हैं, लेकिन लंबी अवधि के लिए इनमें भी ज्यादा नुकसान नहीं होगा।

स्मॉलकैप में दम

जानकारों का कहना है कि जो आपको सबसे ज्यादा सुख देता है, वही आपको सबसे ज्यादा दर्द भी देता है। स्मॉल कैप स्टॉक्स ने पिछले 2-3 साल में बहुत अच्छा रिटर्न दिया है। आगे भी अच्छा रिटर्न देते रहेंगे। इस बिना घबराए प्लान बनाएं और स्मॉल कैप में निवेश की अपनी पूंजी को बढ़ा सकते हैं। अगर आपको पास कैश पड़ा है तो यह सही समय है कम कीमत पर अच्छे शेयरों में पैसा लगाने का। स्मॉल कैप भारत में शेयर बाजार का फ्यूचर हैं।

लार्ज कैप शेयर इकोनॉमी के साइज के हिसाब से बहुत बड़े हैं। अनिश्चितता के बावजूद स्मॉल कैप ही वह शेयर हैं, जिनमें संभावना दिखती है। लार्ज-कैप (जिसे कभी-कभी बिग कैपर भी कहा जाता है) से तात्पर्य ऐसी कंपनी से है जिसका बाजार पूंजीकरण मूल्य 10 बिलियन डॉलर से अधिक है। लार्ज कैप ईलार्ज मार्केट कैपिटलाइजेशनर शब्द का संक्षिप्त रूप है। बाजार पूंजीकरण की गणना किसी कंपनी के बकाया शेयरों की संख्या को उसके प्रति शेयर स्टॉक मूल्य से गुणा करके की जाती है। जानकारों का कहना है कि अभी लॉर्ज कैप में ज्यादा मुनाफा मिलने के चांस नहीं हैं, लेकिन ये सुरक्षित हैं। इनमें निवेशकों को भले ही रिटर्न कम मिले, लेकिन नुकसान नहीं होता।

मिड कैप फंड

मिड कैप फंड एक पूल्ड निवेश है जो सूचीबद्ध शेयरों की मध्य-सीमा में बाजार पूंजीकरण वाली कंपनियों पर केंद्रित है। इस स्टॉक की अंतर्निहित कंपनियाँ (मध्यम आकार की कंपनियां) बड़ी-कैप कंपनियों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक रिटर्न देती हैं, जिसमें स्मॉल-कैप फंड की तुलना में कम जोखिम कारक होता है। यह उन निवेशकों के लिए उपयुक्त हैं जो अपने निवेश में मध्यम जोखिम के लिए तैयार हैं। मिड कैप फंड, लार्ज-कैप फंड के विपरीत, कम जोखिम अनुपात नहीं रखते हैं। न ही उनमें स्मॉल कैप फंड की तरह उच्च जोखिम होता है। इसलिए, यह कहीं बीच में है। यह उन निवेशकों के लिए सबसे उपयुक्त हो सकता है जो मध्यम जोखिम लेने की क्षमता रखते हैं।

इसलिए स्मॉल कैप खरीदें

जानकारों का कहना है कि सत्ता में जो भी पार्टी रहे, भारत की ग्रोथ जारी रहेगी। यहां तक पिछली गठबंधन सरकारों ने भी इक्विटी मार्केट के रिटर्न, फिस्कल मैनेजमेंट और जीडीपी ग्रोथ के मामले में शानदार नतीजे दिए हैं। लिहाजा, यहां निराश होने की जरूरत नहीं है। इसलिए आपके पास पैसा है तो स्मॉल कैप फंडों में लगाएं और अच्छा मुनाफा प्राप्त करें। बाजार के जानकारों का कहना है कि निवेशक छोटे शेयरों में पैसा लगाकर अच्छा पैसा कमा सकते हैं। इसलिए एक बेहतर प्लानिंग के साथ निवेश किया जाए तो कोई बाजार से पैसा कमा सकता है और अपना भविष्य सुरक्षित कर सकता है। इसलिए पहले अपना प्लान बना लें।

एक नहीं, सात तरह की पेंशन देता है ईपीएफओ

- पीएफ सब्सक्राइबर को 58 साल की उम्र पूरी होने पर मिलती है पेंशन
- सब्सक्राइबर की पत्नी, बच्चे, माता-पिता व नॉमिनी भी पेंशन के हकदार
- बेसिक सैलरी पर 12% की कटौती ईपीएफ के लिए की जाती है

बिजनेस डेस्क

प्राइवेट सेक्टर में काम करने वाले वर्कर्स की बेसिक सैलरी पर 12% की कटौती ईपीएफ अकाउंट के लिए की जाती है। साथ ही कंपनी भी इतना ही पैसा कर्मचारी के पीएफ खाते में जमा करती है। एम्प्लॉयर की तरफ से जमा किए जाने वाले पैसों में से 8.33% हिस्सा ईपीएस (कर्मचारी पेंशन योजना) में जाता है, जबकि बचा हुआ 3.67% हिस्सा ईपीएफ में जाता है। अम्पूमन ईपीएफओ अपने सब्सक्राइबर के 58 साल की उम्र पूरी कर लेने पर पेंशन देना शुरू कर देता है। लेकिन, अगर कोई अंशधारक 58 साल की बजाय 60 साल की उम्र में ईपीएफओ से पेंशन लेता है तो उसे ज्यादा पेंशन मिलती है। लेकिन उन्हें 10 साल की सर्विस पूरी होने पर 50 साल उम्र में भी पेंशन मिल सकती है। लेकिन इसके लिए उसे कुछ शर्तों को पूरा करना होगा। इतना ही नहीं ईपीएफओ सात तरह की पेंशन देता है। आइए जानते हैं उनके बारे में...।

मान लीजिए कि किसी सब्सक्राइबर की सर्विस 10 साल की नहीं हुई है और उससे पहले ही वह विकलांग हो जाता है। ऐसी स्थिति में क्या उसे पेंशन मिलेगी? इसी तरह अगर किसी सब्सक्राइबर की 50 साल की उम्र से पहले ही मौत हो गई तो क्या उसकी पत्नी और बच्चों को पेंशन मिलेगी? इन दोनों मामलों में पेंशन मिलेगी। इसी तरह की कई और परिस्थितियां हैं जिनके लिए ईपीएफओ ने नियम बनाए हैं। यहां तक कि सब्सक्राइबर के दो से ज्यादा बच्चों को भी पेंशन मिल सकती है। ईपीएफओ ने पेंशन को मोटे तौर पर सात श्रेणियों में बांटा है।

रिटायरमेंट पेंशन

यह सामान्य पेंशन है। यह पेंशन सब्सक्राइबर्स की 10 साल की सर्विस या 58 साल की उम्र पूरी होने पर दी जाती है।

अर्ली पेंशन

अर्ली पेंशन उन सब्सक्राइबर्स को दी जाती है जो 50 साल के हो चुके हैं, उनकी सर्विस 10 साल की हो चुकी है और वे किसी लॉस ईपीएफ कंपनी से जुड़ चुके हैं। उन्हें 50 साल की उम्र में पेंशन दी जा सकती है या फिर वे पूल पेंशन पाने के लिए 58 साल तक इंतजार कर सकते हैं। अगर वे अर्ली पेंशन पाते हैं तो उन्हें हर साल कार फीसदी कम पेंशन मिलेगी। मसलन अगर कोई सब्सक्राइबर 58 साल की उम्र में 10,000 रुपये की पेंशन का हकदार है तो 57 साल में उसे 9,600 रुपये और 56 साल में 9,216 रुपये पेंशन मिलेगी।

विकलांग पेंशन

यह पेंशन ऐसे सब्सक्राइबर्स को दी जाती है जो सर्विस के दौरान अस्थाई या स्थाई रूप से विकलांग हो जाते हैं। यह पेंशन पाने के लिए उम्र और सेवा अवधि की कोई सीमा नहीं है। अगर किसी सब्सक्राइबर ने एक महीने के लिए भी ईपीएफ में योगदान दिया है तो वह इस पेंशन का हकदार है।

विधवा या बाल पेंशन

सब्सक्राइबर की मौत होने पर उसकी विधवा और 25 साल से कम उम्र वाले बच्चे पेंशन के हकदार होंगे। तीसरा बच्चा भी पेंशन का हकदार है लेकिन पहले बच्चे की उम्र 25 साल होने पर ही उसे पेंशन मिलेगी। ऐसे में पहले बच्चे की पेंशन बंद हो जाएगी और तीसरे बच्चे की शुरू हो जाएगी। चौथे बच्चे के लिए भी यह तरीका लागू होगा। यानी दूसरे बच्चे की उम्र 25 साल होने पर उसकी पेंशन बंद हो जाएगी और चौथे की शुरू हो जाएगी। इस मामले में भी उम्र या व्यूमलन सेवा की कोई बाध्यता नहीं है। अगर किसी सब्सक्राइबर ने एक महीने का भी योगदान दिया है तो उसकी मौत होने पर उसकी विधवा और बच्चे पेंशन के हकदार होंगे।

अनाथ पेंशन

अगर किसी सब्सक्राइबर की मौत हो जाती है और उसकी पत्नी की भी मौत हो जाती है तो ऐसी स्थिति में 25 साल से कम उम्र के उसके दो बच्चे पेंशन के हकदार होंगे। लेकिन बच्चों की उम्र 25 साल होते ही पेंशन बंद हो जाएगी।

नॉमिनी पेंशन

सब्सक्राइबर की मौत के बाद नॉमिनी पेंशन का हकदार बनता है। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि सब्सक्राइबर ने ईपीएफओ पोर्टल पर ई-नॉमिनेशन फॉर्म भरा हो।

आश्रित माता-पिता पेंशन

अगर किसी सिंगल ईपीएफओ सब्सक्राइबर की मौत हो जाती है तो उसके आश्रित पिता पेंशन के हकदार होंगे। पिता की मौत के बाद सब्सक्राइबर की मां को पेंशन मिलेगी। उन्हें पूरी उम्र पेंशन मिलेगी। इसके लिए फॉर्म 10 डी भरना होगा।

43.5 प्रतिशत ही थी साक्षरता दर भारत में वर्ष 1981 में, जबकि वर्ष 2011 में यह बढ़कर 73 प्रतिशत हो गई और अब यह आंकड़ा इससे भी बहुत आगे निकल चुका है।

आजकल

चुनाव प्रचार से गायब फिल्मी सितारे

अनंत विजय
anant@nda.jagran.com

लगभग हर चुनाव में कुछ मिथक टूटते हैं तो कई नए बनते हैं। इस बार भी ऐसा देखने में आया है। वस्तुत: चुनावी रैलियों में भीड़ एकत्रित करने और मतदाताओं को रिझाने के लिए पहले फिल्मी सितारों को भी बुलाया जाता था। क्षेत्रीय समस्याओं और दल विशेष की विचारधारा से अनभिज्ञ ये सितारे कुछ हद तक अपने प्रशंसकों पर प्रभाव डालने में सफल भी रहे। परंतु अब यह परंपरा समाप्त हो गई है। यह इस तथ्य को भी इंगित करता है कि भारतीय मतदाता जागरूक हो रहा है जो लोकतंत्र के लिए शुभ संकेत है

बीते वर्षों एक चुनावी रैली के दौरान महिमा चौधरी। फाइल

बीते वर्षों चुनाव प्रचार के दौरान रवीना टंडन। फाइल

देश में लोकसभा चुनाव संपन्न हो चुके हैं। राजग यानी राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन को जनादेश मिला है। नरेन्द्र मोदी लगातार तीसरी बार प्रधानमंत्री पद की शपथ लेने जा रहे हैं। स्वाधीन भारत के इतिहास में यह दूसरा अवसर है जब कोई प्रधानमंत्री लगातार तीसरी बार देश की बागडोर संभालने जा रहा है। प्रचंड गर्मी में आयोजित लोकसभा चुनाव कई मायनों में पिछले चुनावों से भिन्न रहा। इस चुनाव के दौरान कई मिथक टूटे। कई नए बने। इस पर विस्तार से बात होगी, लेकिन पहले एक कहानी, जो इमरजेंसी के बाद हुए लोकसभा चुनाव से जुड़ी है। संजय गांधी अमेठी लोकसभा क्षेत्र से चुनाव लड़ रहे थे। उनके चुनाव प्रचार के लिए अभिनेता दिलीप कुमार को बुलाया गया था। अमेठी लोकसभा क्षेत्र में दिलीप कुमार के पोस्टर लगा दिए गए थे। पोस्टर में बताया गया था कि दिलीप कुमार सात मार्च को अमेठी आ रहे हैं। अपील की गई थी कि भारी संख्या में लोग दिलीप कुमार की सभा में शामिल हों। सुबह से ही लोग अपने पसंदीदा अभिनेता को देखने के लिए सभास्थल पर जमा होने लगे थे। लंबी प्रतीक्षा। दिलीप कुमार नहीं आए। लोग निराश होकर घर लौट गए। दरअसल किसी ने दिलीप कुमार को आठ मार्च की तिथि बता दी थी और संजय गांधी का चुनाव प्रचार देख रही टीम को गलती से सात मार्च बता दिया था। सात मार्च को जब दिलीप कुमार नहीं आए तो किसी ने उनसे संपर्क भी नहीं किया। लेकिन दिलीप कुमार को तो आठ मार्च की तारीख दी गई थी। वह आठ मार्च को फुरसतगंज हवाई पट्टी पर उतरे। वहां उन्हें रिसीव करनेवाला कोई नहीं था। वर्ष 1977 में अमेठी में टैक्सी आदि नहीं मिलती थी, बस का आसरा था। दिलीप कुमार एक पीपल के पेड़ के नीचे दो घंटे तक खड़े रहे। दो घंटे के बाद एक बस मिली जो उन्हें अमेठी तक ले गई। संजय गांधी की टीम तक खबर भिजवाई गई। फिर उसी दिन दिलीप कुमार की सभा तय की गई, लेकिन जनता तक सूचना नहीं पहुंच पाने के कारण सभा बुरी तरह से पिट गई। विनोद मेहता ने इस पूरे प्रसंग को अपनी पुस्तक में लिखा है।

इस कहानी को बताने का उद्देश्य यह है कि चुनाव के दौरान पहले फिल्मी सितारों को आमंत्रित किया जाता था। उसे प्रत्याशी विशेष के पक्ष में प्रचार करवाया जाता था। उनके रोड शो आयोजित किए जाते थे। कई बार तो इस तरह की बातें भी सामने आती थीं कि फलां सितारे को फलां उम्मीदवार ने इतनी धनराशि देकर अपने क्षेत्र में प्रचार के लिए बुलाया। फिल्मी सितारों का राजनीति से कोई लेना देना नहीं होता था। भीड़ जुटाने के लिए और मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए उन्हें रैलियों में बुलाया जाता था। अब जरा सोचिए कि महिमा चौधरी का बिहार की राजनीति से क्या लेना देना हो सकता है। बिहार की जमीनी हकीकत की कितनी जानकारी उन्हें होगी। लेकिन करीब तीन दशक पहले बिहार में होने वाले चुनावों में उन्हें आमंत्रित किया जाता था। रवीना टंडन भी चुनावी रैलियों और रोड शो में शामिल हो चुकी हैं। अमेठी में दिलीप कुमार का किस्सा आप पढ़ चुके हैं। इसके अलावा उन्नाव में भी एक प्रत्याशी के पक्ष में कई फिल्मी सितारों ने प्रचार किया था। बंगाल में तो फिल्मी सितारे आक्षरक रूप से प्रचार करते रहे हैं, अब भी कर रहे हैं। ममता बनर्जी तो हर लोकसभा चुनाव में बंगाली फिल्म इंडस्ट्री के अलावा अन्य क्षेत्र के ख्यातनाम व्यक्तित्व को लोकसभा में टिकट देकर भी सफलता हासिल करती रही हैं। इस वर्ष मार्च में एकनाथ शिंदे की शिवसेना में फिल्मी सितारे गोविंदा को शामिल करवाया गया था, पर चुनाव प्रचार के दौरान गोविंदा दिखे नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि शिंदे की शिवसेना ने गोविंदा को अपनी पार्टी में सिर्फ खबर बनाने और विरोधी उद्धव गुट पर दबाव बनाने के लिए शामिल करवाया। उत्तर प्रदेश में हुए चुनाव प्रचार में भी इस बार सितारे नहीं दिखे। समाजवादी पार्टी के नेता अमर सिंह जब तक जीवित थे तो वह हिंदी फिल्मों के सितारों को चुनाव प्रचार में लाते रहते थे। चुनाव प्रचार में सितारों को ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में घुमाया जाता था। उद्देश्य यह होता था कि फिल्मी सितारों के प्रशंसकों के वोट हासिल किए जाएं। अभिनेता या अभिनेत्री को न तो क्षेत्र की जानकारी होती थी, न ही स्थानीय समस्याओं की। संबंधित पार्टी की विचारधारा को जानने की अपेक्षा करना तो व्यर्थ ही है। पर तब ऐसा देखा जाता था कि फिल्मी अभिनेता और अभिनेत्रियों के आने से बहुत हद तक वोटर प्रभावित हो जाते थे। जिस प्रत्याशी के लिए ये लोग घूमते थे, उन्हें थोड़ा बहुत लाभ हो जाता था। धीरे धीरे यह परंपरा कम होती चली गई और इस चुनाव में तो लगभग समाप्त हो गई।

चुनाव के दौरान फिल्मी सितारों की उपयोगिता समाप्त होने के कारणों पर विचार करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि अब हमारे देश का मतदाता अपेक्षाकृत परिपक्व हो गया है। वह इस तरह के चुनावी हथकंडों से प्रभावित नहीं होता। अब ग्लैमर से प्रभावित होकर वोट नहीं डालता। मतदाता अब अपने बेहतर भविष्य, स्थानीय और राष्ट्रीय मुद्दों को ध्यान में रखकर मतदान करता है। अब यदि हम मतदाताओं के परिपक्व होने के कारणों को देखें। जिस तरह से देश में साक्षरता की दर बढ़ी है उसने देश के वोटरों को अपने अधिकारों के प्रति सजग किया। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, देश में साक्षरता दर लगभग 73 प्रतिशत थी जो बढ़कर करीब 78 प्रतिशत हो गई है। साक्षरता दर को शैक्षणिक विकास का आधारभूत संकेत माना जाता है। समाजशास्त्र के सिद्धांत के अनुसार साक्षरता दर लोगों के जीवन स्तर को बेहतर करने का माध्यम है। इससे सामाजिक स्तर के बेहतर होने का अनुमान भी लगाया जाता है। भारत सरकार के साक्षरता दर के आंकड़ों के विश्लेषण से एक महत्वपूर्ण बात सामने आती है कि देश में ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर काफी बेहतर हुई है। अब महिलाओं और पुरुषों की साक्षरता दर का अंतर भी काफी घटा है। महिलाओं की साक्षरता का प्रभाव भी लोकसभा चुनाव के मतदान पर दिखता है। महिलाएं जितनी अधिक साक्षर होंगी, हमारा लोकतंत्र उतना ही अधिक मजबूत होगा। महिलाएं अब अपने मुद्दों को बेहतर समझती हैं। मतदान के लिए उनकी स्वयं की समझ विकसित हो चुकी है। वे अब पुरुषों के बताए मुद्दों पर मतदान नहीं करतीं, बल्कि अपना निर्णय स्वयं लेती हैं।

हमारे देश में प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी हुई है। भारत सरकार के आंकड़ों के अनुसार, वर्ष 2022-23 में प्रति व्यक्ति आय 98,374 रुपये है। साक्षरता में जब आय जुड़ जाती है तो लोगों की आकांक्षाएं बढ़ जाती हैं। इस तरह के सोशल इंडिकेटर्स के विश्लेषण से साफ होता है कि मतदाता क्यों परिपक्व हो रहे हैं। क्यों अब चुनाव के दौरान फिल्मी सितारों की उपयोगिता समाप्त हो गई है। राजनीति का तो यह आधारभूत सिद्धांत है कि अगर आप उपयोगी हैं तो ठीक है, अन्यथा आपको भुलाने में जरा भी समय नहीं लगता है। हाल ही में संपन्न हुए लोकसभा चुनाव में इसी आकांक्षा का प्रकटीकरण हुआ है। लोकतंत्र के मजबूत होने और मतदाताओं के परिपक्व होने की यह कहानी आशान्वित करती है।

खरी खरी

बदनाम होने से बच गया ईवीएम

विनोद कुमार विक्की

इसी सप्ताह मंगलवार यानी चार जून को फुलेरा पंचायत के प्रधान पद के आकांक्षी भूषण और उप प्रधान पद के आकांक्षी विनोद, दोनों ही चाय की टपरी पर बैठकर मोबाइल में लोकसभा चुनाव का परिणाम देख रहे थे।

भूषण (खैनी रगड़ते हुए) : 'देख रहा है बिनोद...'

विनोद (गर्दन उचकाते हुए) : 'आंय...'

भूषण : 'इस बार एकिजट पोल तो चार सौ पार का दावा कर रहा है, क्या लगता है तुमको, एतना सीट आ जाएगा?'

विनोद : 'पता नहीं भैया, ई एग्जिट पोल तो आप जैसे पढ़े-लिखे लोग ही जानते होंगे, हमरा तो कुछ समझे में नहीं आता है। अब दावा कितना सही निकलेगा, ई तो शाम तक पता चलिए जाएगा... बाकी इस बार दावा तो हम और आप भी कर ही रहे हैं उपप्रधान और प्रधान बनने का...'

फिर खैनी को निचले जबड़े में स्थापित कर दोनों ही मोबाइल में मतगणना रिपोर्ट देखने में व्यस्त हो गए। दोपहर में भूषण माथे से पसीना पोछते हुए बोला, 'देख रहा है बिनोद, ई गर्मी... भले रिजल्ट चार सौ पार जाए न जाए, ससुरा गर्मी का पारा पचास पार चला गया है।'

गमछा से पसीना पोछते हुए विनोद बोला, 'सहिए कह रहे हैं भूषण भैया, गर्मी तो नेता और अधिकारी से भी ज्यादा आतंक मचा रखा है... जब पेड़-पौधा काट कर एसी लगवाया जाएगा, तो गर्मी पड़ेगा ही न भैया।'

विनोद की बातों से सहमत भूषण ने गर्दन हिलाते हुए कहा, 'मतगणना शुरू हुए छह घंटा से भी अधिक हो गया है, लेकिन परिणाम कुछ क्लियर नहीं हो पाया है और अभी तक ईवीएम के कैरेक्टर पर किसी ने अंगुली भी नहीं उठाया है?'

विनोद मासूमियत भरे लहजे में बोला, 'अभी तक सबका रुझान ठीके-ठाक जा रहा है भैया, लगता है फाइनल रिजल्ट का इंतजार कर रहे होंगे, उसके बाद ही ईवीएम को गरियाएंगे... तब तक एक-एक चाय और बोल दिया जाए।'

'ई प्रचंड गर्मी में कितना चाय पीएगा दादू, लाओ चुनौटी, खैनी ही बनाया जाए।' भूषण ने मुंह बनाते हुए जवाब दिया।

देर शाम परिणाम घोषित होने के बाद भूषण बोला, 'जानता है बिनोद, अपने प्रधान मंजू देवी की तरह केंद्र के चुनाव में भी नेता लोग काम करते नहीं हैं और कम सीट आने पर आरोप ईवीएम पर लगा देते हैं।'

'सहिए कह रहे हैं भैया... लेकिन हमलोग जीतेंगे, तो क्षेत्र में काम करेंगे,' विनोद गंभीरतापूर्वक बोला।

'बिलकुल सही, क्षेत्र में विकास का काम करेंगे', भूषण ने भी अपनी सहमति जताई।

विनोद (बीच में टोकते हुए), 'आप भी न भैया... विकास का काम विकास करेगा न! हम काहे करेंगे उसका काम। अब विकास और सचिव जी का काम भी प्रधान और उप प्रधान करने लगे, तब तो हुआ...'

भूषण (खिसियाते हुए) : 'अरे एकदम से बकलोले हो का, विकास सहायक का काम नहीं कर रहे हैं हम, विकास का काम करेंगे, विकास मने डेवलपमेंट...'

'त ऐसे कहिए न भैया,' विनोद ने समझदारी दिखाई।

भूषण (मुस्कुराते हुए) : 'लेकिन कुछ भी कहो, इस बार के परिणाम ने सभी पार्टी को खूरा होने का मौका दे दिया, चलो अब हम लोगों को भी अपने पंचायत चुनाव की तैयारी करनी है और मोबाइल भी चार्ज करना है।'

'सहिए कह रहे हैं भैया, इस बार सब पार्टी खुरा है और सबसे बड़का बात कि इस बार ईवीएम भी बदनाम होने से बच गया।' आश्वस्त भाव से विनोद बेंच से उठते हुए बोला।

(लेखक व्यंग्यकार हैं)

पोस्ट

गंभीर अपराधों के ऐसे आरोपित, जिनके विरुद्ध न्यायालय द्वारा आरोप तय कर दिए गए हों और वे न्यायिक हिरासत में हों, उनको चुनाव लड़ने पर बंदिश होनी चाहिए। कानून में संशोधन पर चर्चा हो।

आरके सिंह @ipsvijrk

मुझे कंगना रनौत से लगाव नहीं है, लेकिन जो लोग उनको 'थप्पड़' मारे जाने की घटना पर जश्न मना रहे हैं, उनका मैं समर्थन नहीं कर सकती। अगर सुरक्षाकर्मी कानून को अपने हाथ में लेना शुरू कर दें तो हममें से कोई भी सुरक्षित नहीं रह सकता।

शबाना आजमी @AzmiShabana

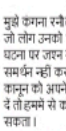

उत्तर प्रदेश में भाजपा ने भाजपा को हराया। राजस्थान में उसे अपने ही दिग्गजों को नाराज करने की कीमत चुकानी पड़ी। उत्तर-पूर्व में जातीय समस्याओं से ठीक से न निपट पाने के कारण उसका सफाया हो गया।

प्रकाश सिंह @singh_prakash

कोई भी व्यक्ति स्वयं यह नहीं तय करता कि उसका जन्म किस देश में, किस धर्म में या किस जाति में होगा। जैसे आप अपने देश की नागरिकता बदल सकते हैं या धर्म बदल सकते हैं, अपनी जाति बदलने की भी आजादी होनी चाहिए।

डा. अनुज कुमार @dranuj_k

वर्दी की मर्यादा बनी रहनी चाहिए। जब वर्दी मिलती है तो जिम्मेदारी के साथ मिलती है। इसकी गरिमा को बनाए रखें। अगर रक्षक ही भक्षक बन जाएगा तो समाज में वर्दी की अहमियत खत्म हो जाएगी।

अजय ठाकुर @thakurkabaddi

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या अग्निपथ योजना की समीक्षा की मांग सही है?

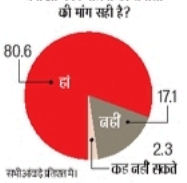

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या राहुल गांधी को लोकसभा में विपक्ष का नेता बनना चाहिए?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

झूठी बातें बोलकर झूठा किया प्रचार,
फिर भी बनने जा रही मोदी की सरकार।
मोदी की सरकार गले की बनकर हड्डी,
चुभा करेगी रोज उन्हें जो रहे किसड्डी।
दुखी जार्ज सोरोस चलीं नाजकी घातें,
संघ की सर्वत्र न रोक प्रचारित झूठी बातें।

रचनाकर्म

मोदी का संवैधानिक दशक

ब्रजबिहारी

यह पुस्तक मोदी सरकार द्वारा पिछले एक दशक में किए गए संवैधानिक बदलावों और उनके पीछे की प्रभावी और भविष्योन्मुखी दृष्टि का आकलन करती है...

पुस्तक : कांस्टीट्यूशनल जर्नी, ऐन ओवरव्यू फ्राम 2014-24
लेखक : ऋषि राज सिंह और प्रिंस शुक्ला
प्रकाशक : सेंटर फार नरेन्द्र मोदी स्टडीज
मूल्य : 250 रुपये

मोदी सरकार का दस साल का कार्यकाल उल्लेखनीय और विशिष्ट रहा है। इसकी देश-विदेश में खूब चर्चा भी हुई है। राजनीतिक स्थिरता और उससे पैदा हैने वाली प्रगति इन चर्चाओं के केंद्र में रही, लेकिन पिछले एक दशक में हुए संवैधानिक परिवर्तन राजनीतिक व आर्थिक बदलावों से अधिक प्रभावकारी और भविष्योन्मुखी रहे हैं। मोदी सरकार के संवैधानिक बदलावों पर समग्र दृष्टि डालने वाली कोई पुस्तक उपलब्ध नहीं थी। लेखकद्वय ऋषि राज सिंह और प्रिंस शुक्ला रचित 'कांस्टीट्यूशनल जर्नी, ऐन ओवरव्यू फ्राम 2014-24' इस कमी को पूरा करती है।

पुस्तक में पिछले दस साल के दौरान हुए संवैधानिक परिवर्तनों का ब्योरा भर नहीं दिया गया है, बल्कि उसके पीछे की दृष्टि को भी स्पष्ट किया गया है। लेखकों ने तथ्यों व तर्कों के आधार पर यह प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के पिछले दो कार्यकाल में संविधान में हुए संशोधन राष्ट्रहित और समाजहित की कसौटी पर खरे उतरते हैं। चार खंडों में बंटी इस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य मोदी सरकार के पिछले दस साल के कार्यकाल में संविधान में हुए संशोधन के इर्द-गिर्द खड़े प्रश्नों के समाधानकारक उत्तर खोजना है। इस पुस्तक की मौलिकता की झलक इसके पहले अध्याय के शीर्षक 'बी द पीपुल आफ भारत' में ही मिल जाती है। 'बी द पीपुल आफ इंडिया' की जगह 'बी द पीपुल आफ भारत' लिखना और उसे समझना बहुत आवश्यक है। इंडिया कहने में वह बात नहीं आती है, जो भारत कहने में है। भारत शब्द 'भा' और 'रत' से मिलकर बना है। 'भा' का अर्थ है ज्ञान रूपी प्रकाश और 'रत' का अर्थ है लीन यानी एक ऐसा देश जो ज्ञान रूपी प्रकाश की खोज में लीन है। यह खोज एक निरंतर प्रक्रिया है। यह नए भारत को पहचानने की प्रक्रिया है।

पुस्तक के पहले खंड में उन संवैधानिक संशोधनों का विवरण है, जो मोदी सकार के एक दशक के शासनकाल में किए गए। इस सरकार का पहला संविधान संशोधन जजों की नियुक्त को लेकर था, जिसे सुप्रीम कोर्ट ने असंवैधानिक करार देकर खारिज कर दिया। संशोधन क्या है और क्यों है और क्यों सुप्रीम कोर्ट ने उसे पलट दिया, यह सब इस पुस्तक को पढ़ते हुए जाना जा सकता है। अपने हर इशारे में पीएम ने इसे तकरार का मुद्दा नहीं बनाया। इसके अनेक कारण हो सकते हैं, लेकिन इससे साबित होता है कि प्रधानमंत्री के व्यक्तित्व में लचीलापन भी है।

दूसरा खंड बताता है कि कैसे मोदी सरकार ने महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा दिया है। संविधान निर्माताओं ने जो वादे किए थे और जिन्हें राजनीतिक कारणों से स्थगित किया जाता रहा है, उसे इस सरकार ने अरोधरहित मार्ग दिया। तीसरा खंड कश्मीर से संबंधित है। पांच अगस्त, 2019 को संसद में जब जम्मू कश्मीर के विशेष दर्जे को खत्म करने की घोषणा की गई तो आलोचकों ने आशंकाओं के अंबार लगा दिए, लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है, स्पष्ट होता जा रहा है कि मोदी सरकार का यह कदम नए कश्मीर के रूपांतरण का कारण बन है। इस खंड में कश्मीर का संक्षिप्त इतिहास भी दिया गया है, ताकि पाठक जब इसे पढ़े तो उसके सामने संदर्भ और परिप्रेक्ष्य स्पष्ट रहे।

पुस्तक का अंतिम खंड 'ए जर्नी फ्राम इंडिया टु भारत' मोदी सरकार द्वारा देश के आपराधिक कानूनों में किए गए बदलावों पर केंद्रित है। यह अफसोस की बात है कि अंग्रेजों से देश को मुक्त कराने के लिए भारतीयों के लंबे संघर्ष को कुचलने के लिए बनाए गए काले कानूनों को इससे पहले बदलने के लिए कोई पहल क्यों नहीं की गई। इस खंड में भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम पर विस्तार से चर्चा की गई है।

यह पुस्तक उन सभी पाठकों के लिए उपयोगी है, जो बदलते हुए भारत के बारे में जानना और समझना चाहते हैं।

विदेशी आक्रांताओं से संघर्ष की गाथा

मुकेश तोरसिया

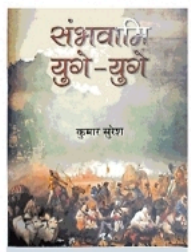

पुस्तक : संभवामि युगे-युगे
लेखक : कुमार सुरेश
प्रकाशक : विद्या विहार, नई दिल्ली
मूल्य : 300 रुपये

भारतीय सभ्यता प्राचीन काल से ही उन्नत और समृद्ध रही है। इसने विश्व के लोगों को सदा अपनी ओर आकर्षित किया है। यहां की संपदा की खबरें सुनकर समय-समय पर अनेक विदेशी आक्रांता आकर्षित हुए और आक्रमण किए। लेखक कुमार सुरेश की पुस्तक 'संभवामि युगे-युगे' में विदेशी आक्रांताओं के विरुद्ध भारतीय योद्धाओं के संघर्ष की गाथा है।

पुस्तक बताती है कि ईस्वी पूर्व तीसरी सदी से लेकर दूसरी ईस्वी सदी तक अधिकांश आक्रांता चीन और मध्य एशिया की ओर से आए थे। इनमें शक, कुषाण और हूण प्रमुख थे। इन्हें भारत में सफलता भी मिली और इन्होंने अपने राज्य भी स्थापित किए थे। ये सभी सैनिक दृष्टि से भले जीते, लेकिन भारत की श्रेष्ठ सभ्यता ने इन सभी को अपने में समाहित कर लिया। ये सभी प्राचीन सनातन संस्कृति में घुल-मिलकर उसका एक अंग बन गए। आज भारत में कोई भी समूह अपने मूल नाम शक, कुषाण अथवा हूण से नहीं पहचाना जाता। इसके बाद इस्लाम ने अरब व्यापारियों के माध्यम से सातवीं शताब्दी में तटीय प्रदेशों में प्रवेश किया था। भारत को राजनीतिक रूप से आक्रामक इस्लाम का अनुभव पहली बार 712 ई. में हुआ, जब मोहम्मद बिन कासिम ने सिंध पर आक्रमण किया था। हालांकि इतिहासकारों ने जो इतिहास लिखा, उसमें आक्रांताओं की विजय को बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया गया। भारतीय मध्यकालीन इतिहास जब लिखा गया था, तब इन्हीं स्रोतों का उपयोग किया गया था। तस्वीर का एक पहलू यह भी था कि इस्लामी शक्ति ने अपने उभार के 100 वर्षों के अंदर दुनिया के एक बड़े भाग पर अधिकार कर लिया था। वही शक्ति भारत में आने के बाद अपने विस्तार की गति खो बैठी थी। उसे खासे प्रतिरोध का सामना करना पड़ा था। पुस्तक में ''सोने की चिड़िया पर बुरी नजरें'', और ''जब सिकंदर आता है, कोई पोरस खड़ा हो जाता है'' जैसे 22 अध्याय हैं। इतिहास में रुचि रखने वालों के लिए यह उपयोगी पुस्तक हो सकती है।

पीड़ा की नदी पार करने जैसा

यतीन्द्र मिश्र

कई दशक बीतने के बाद बचपन को टटोलना बहुत ही मुश्किल कार्य होता है। यादें तो बहुत होती हैं, परंतु बिखरी हुई होती हैं। ऐसे में इस पुस्तक में लेखक ने अपनी यादों को इस तरीके से दर्शाया है कि पाठक उसमें स्वयं ही बंध जाता है

पुस्तक : बोरसी भर आंच
लेखक : यतीश कुमार
प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
मूल्य : 350 रुपये

स्मृतियां जीवन का आलोक-स्तंभ होती हैं, जो स्वयं को बार-बार खोजने का प्रयत्न करती हैं। अकेलेपन की मित्र और एकांत से उबारने की जादुई छड़ी... नजुक बचपन की मासूम स्मृतियां बेहद प्रबल होती हैं, क्योंकि इन यादों के पन्ने जल्दी पुराने नहीं पड़ते। युवा रचनाकार यतीश कुमार ने 'बोरसी भर आंच' में अतीत की स्मृतियों के गुंजलक से अपने बचपन को याद करते हुए जीवन के 20 वर्षों का मार्मिक और ईमानदार संस्मरण सृजनात्मक तरीके से लिपिबद्ध किया है। रचनाकार की स्मृति-यात्रा को शब्दों में पिरोने की रचनात्मकता ने इस कथेतर गद्य को मासूम और खिलंदड़ा एक साथ बनाया है।

यतीश अपने प्रारंभिक जीवन को याद करते हुए अपनी मां, पिता, दूसरे पिता, भाई, बहन, दोस्त, रिश्तेदार, घर, ननिहाल आदि से संबंधित स्मृतियों को साझा करते हैं, जिससे यह उनके बचपन की आत्मकथा जैसी प्रतीत होती है। लेखक के लिए उनका यह संस्मरण अतीत में झांकने की सैरबीन है। यह सैरबीन और कुछ नहीं बल्कि भाषा, शब्दों और शिल्प का व्यक्तिगत माध्यम है, जिससे एक बच्चा लगभग 40 वर्ष की दूरी से दुनिया को देखता है। यादों के सागर में गोते लगाती इस आपबीती में बचपन के स्वप्न के साथ-साथ कल्पन और यथार्थ का सम्मिश्रण जलतरंग की तरह बजता है। समय के साथ बेशक स्मृतियां धूमिल हो जाती हैं। रह जाती हैं, तो बस इनकी तासीर या ताप या भाप, जिसे लेखक पुस्तक में 'आंच' कहते हैं। सच में जब कई दशक बीत चुके हैं, तो बचपन को टटोलना बेहद मुश्किल काम होता है। पुस्तक में यतीश की यादें सम्मोहक ढंग से बिखरी हुई हैं कि लगता है बस पन्ने पलटते जाएं।

लेखक का बचपन और किशोरवय 'परिदृश्य की अकुलाहट', 'असमाप्त तक जाती नदी', 'भागता बचपन', 'दिठिया : मेरे कोमल मन की पक्की ढाल', 'भैया : अनजाना संबल', 'और कितने करीब' जैसे शीर्षकों के अंतर्गत आकार लेता है। संस्मरण के केंद्र में बिहार में किऊल नदी के तट पर बसे लखीसराय कस्बे का एक अस्पताल है, जहां उनका बचपन बीता। अस्पताल के पीछे सड़कों की दीवार बनाकर रहता लेखक का परिवार है। पिता कम्युनिस्ट थे और असमय उनका निधन हो गया। कर्मठ मां वहीं उसी सरकारी अस्पताल में स्टाफ नर्स हैं, जो पितृहीन बच्चों के भविष्य के लिए संघर्षरत हैं। यतीश के पिता के डाक्टर दोस्त, जो कामरेड थे, अपने दिवंगत दोस्त की पत्नी से विवाह करते हैं। उस दौरान लेखक का अकेलापन, दूसरे पिता से उनका संबंध भी बदस्तूर यहां मौजूद है। मां गुस्से में चीख उठे यतीश की पिटाई भी करती हैं और रोती भी हैं। लेखक ने यहां कुछ भी छिपाने की कोशिश नहीं की है, अपनी चोरी की आदत, अपनी शैतानियों के तमाम किस्सों का जिक्र बेहद तटस्थता से किया गया है, जो पारदर्शी मन के जल-दर्पण को कंपाता रहता है। लेखक ने अपनी मां की सहेली नर्स 'मौसी' और चीकू के बीच के संबंध को बड़े धैर्य और सूंदरता के साथ बुना है। वहीं वे बड़े भाई के साथ अपने रिश्ते को बड़ी कुशलता से परखते हैं। बहन रुक्का कवच बनकर हमेशा उनके साथ रहती। बहन के बारे में बात करते वक्त उसके लिए कुछ न कर पाने की छटपटाहट साफ दिखती है। अंत में अपनी पत्नी से अपने संबंध को अभिव्यक्त करते हैं। एक जगह लिखते हैं- 'वह ज्यादा स्त्री थी और मैं ज्यादा पुरुष।' रिश्तों की मजबूत डोर से बंधी यह कहानी लेखक को परेशानियों से विचलित न होकर उसका दृढ़तापूर्वक सामना करना भी दिखाती है। कई जगहों पर हिंदी और उर्दू की चुनी हुई कविताएं या शेरों का इस्तेमाल इस संस्मरण में चार चांद लगा देता है।

संस्मरण किसी व्यक्ति के जीवन का ब्यौरा भर नहीं होता, अपितु उसके समय, परिवेश और समाज का बोध भी कराता है। अस्पताल के इर्द-गिर्द घूमती इस यात्रा में एक बच्चे की नजर से 20वीं शताब्दी के आठवें-नौवें दशक के बिहार की राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक बुनावट की बदलती झलक भी देखने को मिलती है। किऊल नदी के किनारे ही बसे हसनपुर में बालू पर बचंस्व बनाए रखने के लिए गोलियों का चलन आम है। अस्पताल की लाइट जाने पर खुले आकाश के नीचे टार्च की रोशनी में आपरेट कर गोली निकालने की घटना, वहां फैला खून, अस्पताल पर इसका प्रतिकूल प्रभाव, यह सभी लेखक की छोटी उम्र के दिल दहलाने वाले अनुभवों में से थे। पुस्तक में दर्ज घटनाएं बेहद भावनात्मक और मार्मिक हैं, जिसकी बानगी देती इन पंक्तियों पर गौर करें- 'ठंडी लाश की तरह बेजान ठंडी दीवारें कुछ नहीं बोलतीं, बस सुनसान में रोती हुई रहस्यमयी औरत की तरह डरातीं।', 'मैंने मां की अंगुली तेज पकड़ ली। आज भी उस स्मृति में मां अंगुली थामे खड़ी है।' भाई के सैनिक स्कूल की फीस न दे पाने और बहन की शादी की चिंता पर लेखक की मां की सिसकियां जैसे तमाम पहलू भावुक करते हैं। असल में बचपन का बृतांत जन-सम्मान्य की वह चिरपरिचित दारुण कहानी है, जो विचलित करती है। इसे पढ़ते हुए जीना, पीड़ा की नदी पार करने जैसा है।

कल्पमेधा

हम अपने विवेक की कसौटी पर कस कर धर्मग्रंथों और धर्मगुरुओं की बातें मानेंगे, तो फिर कोई झगड़ा पैदा नहीं होगा। कोई भी बात धर्म की किताब में लिखी है, इसलिए कभी मत मानो।
– विनोबा भावे

दुनिया एक रंगमंच है

और सभी पुरुष और स्त्रियां केवल कलाकार हैं।
सबके अपने प्रस्थान और प्रवेश द्वार हैं;
और एक आदमी अपने समय में अनेक भूमिकाएं निभाता है।
– विलियम शेक्सपियर

दूसरी नजर
पी चिदंबरम

> जनता ने अपनी बात कह दी है। लोग स्वतंत्रता, बोलने और अभिव्यक्ति के अधिकार, निजता के अधिकार तथा विरोध के अधिकार को महत्त्व देते हैं। सरकार को 'देशद्रोह' तथा 'मानहानि' के नाम पर फर्जी मुकदमे दायर करने की अपनी प्रवृत्ति छोड़नी चाहिए।

जब आप 9 जून, 2024 को यह स्तंभ पढ़ रहे होंगे, तो नरेंद्र मोदी तीसरी बार भारत के माननीय प्रधानमंत्री बनने वाले होंगे- मगर वे वही मोदी नहीं होंगे। एकदलीय सरकार के अधिनायकवादी प्रधानमंत्री मोदी प्रस्थान करेंगे और कई दलों के गठबंधन से बनी सरकार के प्रधानमंत्री मोदी अंदर आएंगे, जिनके पास बमुश्किल बीस सीटों का बहुमत होगा (जिसमें टीडीपी के 16 सांसद और जद (एकी) के 12 सांसद हैं)। यह उनके लिए बिल्कुल नया अनुभव होगा। मोदी ने प्रचारक, भाजपा के महासचिव, गुजरात के मुख्यमंत्री और भारत के प्रधानमंत्री के रूप में अपने लगभग पचपन वर्षों के सार्वजनिक जीवन में इस भूमिका के लिए तैयारी नहीं की थी। वे एक ऐसे खेल में शामिल होंगे, जिससे वे परिचित नहीं हैं।

आंशिक रूप से बदला हुआ लोकतंत्र

हाल ही में संपन्न हुए लोकसभा चुनावों में भारत के लोगों ने कई ऐसी चीजें हासिल की हैं, जिन्हें कुछ हफ्ते पहले तक लगभग असंभव माना जाता था:

– दोनों सदनों का संचालन सदन के नियमों और सर्वसम्मति के आधार पर होगा, न कि पीठासीन अधिकारी और सदन के नेता की मर्जी के मुताबिक;

– विभिन्न सदन समितियों की संरचना अधिक संतुलित होगी और राजनीतिक दलों के बीच उनके अध्यक्षों का वितरण अधिक समान होगा;

– लोकसभा में विपक्ष का एक मान्यता प्राप्त नेता होगा और विपक्ष में पर्याप्त संख्या में सांसद होंगे;

– भारत के संविधान में तब तक संशोधन नहीं किया जा सकता जब तक कि संसद में सत्ता पक्ष और विपक्ष के बीच सर्वसम्मति न बने;

– मंत्रिमंडल या मंत्रिपरिषद की बैठकें अब प्रधानमंत्री द्वारा लिए गए निर्णयों और कई मामलों में पहले से लागू किए गए निर्णयों का औपचारिक समर्थन करने के लिए नहीं होंगी- मसलन, मंत्रिमंडल को अब विमुद्रीकरण जैसे कठोर कदम के बारे में केवल 'सूचित' नहीं किया जाएगा;

– राज्यों के अधिकारों को स्वीकार किया जाएगा और उनकी बेहतर सुरक्षा की जाएगी;

– राज्यों को निधियों का हस्तांतरण तथा मंत्रालयों/विभागों और योजनाओं के लिए निधियों के आबंटन में मनमानापन कम होगा तथा गठबंधन के घटक दलों की संतुष्टि का ध्यान रखा जाएगा;

– प्रधानमंत्री को सदनों में अब अधिक समय उपस्थित रहने, प्रश्नों का उत्तर देने तथा महत्त्वपूर्ण बहसों में भाग लेने के लिए बाध्य होना पड़ सकता है।

जनादेश का सबक

जनता ने अपनी बात कह दी है। लोग स्वतंत्रता, बोलने और अभिव्यक्ति के अधिकार, निजता के अधिकार तथा विरोध के अधिकार को महत्त्व देते हैं। सरकार को 'देशद्रोह' तथा 'मानहानि' के नाम पर फर्जी मुकदमे दायर करने की अपनी प्रवृत्ति छोड़नी चाहिए। 'मुठभेड़' तथा 'बुलडोजर न्याय' को त्यागना चाहिए (यह विशेष रूप से उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ के लिए एक सबक है)। राममंदिर राजनीति से परे है तथा इसे फिर कभी राजनीतिक उद्देश्यों के लिए नहीं इस्तेमाल किया जाना चाहिए (फैजाबाद निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित समाजवादी पार्टी के 77 वर्षीय अवधेश प्रसाद तथा श्रावस्ती निर्वाचन क्षेत्र से पराजित, प्रधानमंत्री के पूर्व प्रधान सचिव और मंदिर निर्माण ट्रस्ट के प्रमुख नृपेंद्र मिश्र के पुत्र साकेत मिश्र से पूछें)। लोग दरअसल, स्वतंत्र मीडिया चाहते हैं: अब कोई गढ़ा हुआ 'एग्जिट पोल' नहीं चाहिए; अब प्रधानमंत्री की पलक झपकने पर भी अतिशयोक्तिपूर्ण (और उथाक) कवरेज नहीं चाहिए; अब कोई पूर्व-लिखित उत्तरों के अनुरूप प्रश्न; और ईडी-सीबीआइ के पर्चे नहीं पढ़े जाने चाहिए। लोग चाहते हैं कि क्षेत्रीय दल अपने मूल सिद्धांतों के प्रति निष्ठावान रहें और दिल्ली में अलग चेहरा और राज्य की राजधानी में दूसरा चेहरा न दिखाएं। ऐसी पार्टियों को एजीपी, एसएडी, जेजेपी, बीआरएस और जेडी(एस) की तरह दंडित किया जाएगा या बीजेडी और वाईएसआरसीपी की तरह कड़ी चेतावनी दी जाएगी। यह टीडीपी और जेडी (एकी) के लिए एक सबक है।

विपक्ष को एजंडे पर जोर देना चाहिए

विपक्ष को दस साल बाद संसदीय विपक्ष की तरह व्यवहार करने का अवसर मिला है। उसे संसद के अंदर और बाहर अपने एजंडे पर जोर देना चाहिए। यहां उनमें से कुछ ऐसे बिंदु साझा कर रहा हूं, जिन्होंने लोगों की कल्पना को आकर्षित किया और 'इंडिया' गठबंधन के कई उम्मीदवारों को विजयी बनाया:

– सामाजिक-आर्थिक और जातिगत सर्वेक्षण हो।

– संविधान (106वां संशोधन) अधिनियम को तत्काल लागू किया जाए और 2025 से निर्वाचित विधानसभाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण लागू हो।

– मनरेगा सहित हर तरह के रोजगार के लिए 400 रुपए प्रतिदिन का न्यूनतम वेतन लागू हो।

– कृषि ऋणग्रस्तता पर एक स्थायी आयोग नियुक्त किया जाए और उसकी सिफारिशों के अनुसार कृषि ऋण माफ हों।

– सरकारी और सरकार द्वारा नियंत्रित निकायों में 30 लाख खाली पदों को भरा जाए।

– अगर आवश्यक हो तो प्रशिक्षु अधिनियम को संशोधित किया जाए और तत्काल लागू करें, ताकि हर योग्य व्यावसायिक प्रतिष्ठान प्रशिक्षुओं को नियुक्त करने और वजीफे का बोझ साझा करने के लिए बाध्य हो।

– अग्निवीर योजना को खत्म किया जाए।

– नागरिकता संशोधन अधिनियम के कार्यान्वयन को तब तक निलंबित रखा जाए, जब तक कि इसकी संवैधानिकता सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय नहीं की जाती।

– जांच एजंसियों (सीबीआइ, ईडी, एनआइए, एसएफआइओ, एनसीबी, आदि) को एक संयुक्त संसदीय समिति की निगरानी में लाया जाए।

नया खेल

नौ जून को एक नया खेल शुरू होगा। नए खिलाड़ी सबसे आगे होंगे। प्रस्थान करने और प्रवेश करने वालों पर नजर रखें।

लोकतंत्र की वापसी

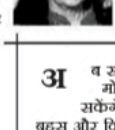

वक्त की नब्ज
तवलीन सिंह

> अब संसद के अंदर विपक्ष को मोदी अनदेखा नहीं कर सकेंगे। अब कानून बनेंगे पूरी बहस और विचार-विमर्श के बाद। वैसे नहीं जैसे मोदी के पिछले दौर में बनाए गए थे। संसद की अहमियत वापस लौट आएगी और शायद वे लोग, जिन्होंने कहना शुरू किया था कि भारत में लोकतंत्र समाप्त हो गया है, उनको अपनी बातें वापस लेनी पड़ेंगी।

कई विश्लेषण हो चुके हैं नतीजों के। ऊब गई हूं उनको पढ़ कर, इसलिए उसके बजाय मैं समझने की कोशिश करूंगी कि नरेंद्र मोदी क्यों पूर्ण बहुमत नहीं ला पाए इस बार। कारण कई होंगे, लेकिन एक अहम कारण यह है कि उनको चाटुकारों ने उनको कभी नहीं बताया कि उनका 'विकसित भारत' वाला नारा खोखला था। सो, सुनिए मेरे अपने गांव की कहानी। इस सुंदर, समुद्र तटीय गांव में मोदी के पहले शासनकाल में इतनी तरक्की हुई है कि जहां कभी यहां के लोग मछली बेचकर गुजारा करते थे, अब पर्यटक इतने आने लगे हैं समुंदर तट का आनंद लेने कि हर दूसरे घर में 'एसी कमरे' मिलते हैं। हर दूसरी गली में दिखते हैं नए रेस्तरां और नई दुकानें।

स्वच्छ भारत अभियान से पहले समुद्र किनारे जब हम घूमने निकलते थे, तो पांव सोच-समझ कर रखते थे, क्योंकि यह समुद्र तट गांव वालों का विशाल शौचालय हुआ करता था। सुबह-सवेरे महिलाएं बैठी दिखती थीं झाड़ियों में छुप कर शौच करती हुई और दिन भर खुलेआम दिखते थे मर्द और बच्चे समुद्र के अंदर अपना काम करते हुए। मोदी के पहले शासनकाल में स्वच्छ भारत का लाभ लेकर यहां के लोगों ने अपने घरों में बनाए निजी शौचालय, सो अब समुद्र किनारे दिखते हैं पर्यटकों के लिए छोटे रेस्तरां, नारियल पानी बेचनेवाले और आसमान में गुब्बारे की सवारी करवाने वाले। गांव में इतनी तरक्की हो गई है कि जहां कभी मुश्किल से एक घर के सामने मोटर गाड़ी दिखती थी, अब हर दूसरे घर के सामने दिखने लगी हैं गाड़ियां।

लेकिन इसी गांव में एक आदिवासी बस्ती है, जहां पिछले दस सालों में कुछ नहीं बदला है। चुनाव प्रचार शुरू होने के बाद मैं इस बस्ती में गई थी, मालूम करने चुनाव के बारे में और लोगों का हाल देखने। मैंने जब लोगों से बात की, तो मालूम हुआ कि उनके लिए सिर्फ एक सरकारी योजना का लाभ मिला है- मुफ्त पांच किलो राशन देने वाली योजना का। उज्ज्वला योजना से सबको सिलेंडर तो मिले हैं, लेकिन उनके लिए इनका कोई उपयोग नहीं है, इसलिए कि गैस का दाम चुकाना उनके वश की बात नहीं है। बेरोजगारी इतनी है कि गांव के बच्चों को भेजा जाता है समुद्र तट पर थोड़ा-बहुत पैसा कमाने पर्यटकों से। स्कूल यहां है, लेकिन खंडहर जैसा। सारे गांव में एक ही लड़की मिली मुझे, जिसको पढ़ाई पूरी करने के बाद सरकारी दफ्तर में नौकरी मिली है। इस बस्ती में बेरोजगारी बहुत बड़ी समस्या है, लेकिन इससे भी बड़ी समस्या है कि दूर तक यहां पानी नहीं मिलता है। टैंकर हर दूसरे दिन आते हैं, लेकिन लोगों के पास पानी खरीदने का पैसा नहीं है।

जब चुनाव नतीजों ने दिखाया कि मोदी के लिए दलितों, पिछड़ों और आदिवासियों का वोट नहीं पड़ा था इस बार उत्तर प्रदेश में, तो मेरा अपना गांव मुझे याद आया। उत्तर प्रदेश जब गई, तो देखा कि बड़े-बड़े 'हाई-वे' बन गए हैं और चमकते, आधुनिक एअरपोर्ट भी। ऐसे गांवों में जहां कभी सड़क नहीं हुआ करती थी, अब सड़कें बन गई हैं, लेकिन इन चीजों का लाभ उनको नहीं हुआ है, जो सबसे गरीब हैं। उनके जीवन में बिल्कुल कोई परिवर्तन नहीं आया है मोदी के राज में, सो अच्छे दिनों का सपना वे कब के भूल चुके हैं।

ऊपर से जब प्रधानमंत्री ने प्रचार के आखिरी दिनों में अपने हर भाषण में मुसलमानों को निशाने पर रखा झूठी बातें कह कर, तो देश भर में मुसलमानों ने ठान लिया कि अबकी बार वे अपना वोट उन लोगों को ही देंगे, जो भारतीय जनता पार्टी को हरा सकें। ऐसा हुआ भी है, सो अब ऐसा लगने लगा है कि कांग्रेस पार्टी के वे पुराने वोट बैंक- दलितों और मुसलमानों के- अब दुबारा बन गए हैं और इसका नुकसान हुआ है भारतीय जनता पार्टी को।

मेरी राय में मोदी इस बार पूर्ण बहुमत नहीं ला पाए इसलिए भी कि उन्होंने लोगों के सामने अहंकार इतना दिखाया कि यहां तक कहने लगे कि उनको परमात्मा ने भेजा है भारत को बचाने के लिए। परमात्मा आम लोगों को नहीं भेजते हैं, जब उनको जरूरत महसूस होती है तो भेजते हैं अवतारों को, फरिश्तों को। तो, मोदी ने जब यह बात कही तो विपक्ष ने खूब मजाक बनाया अपनी आम सभाओं में इनका और लोगों को यह मजाक पसंद भी आया। नतीजा यह कि चार सौ पार तो दूर की बात, भारतीय जनता पार्टी इस बार तीन सौ पार भी नहीं पहुंच सकी है। तो क्या यह अच्छी बात है देश के लिए?

मेरी नजर में यह बात अच्छी इसलिए है कि अब संसद के अंदर विपक्ष को मोदी अनदेखा नहीं कर सकेंगे। अब कानून बनेंगे पूरी बहस और विचार-विमर्श के बाद। वैसे नहीं जैसे मोदी के पिछले दौर में बनाए गए थे। संसद की अहमियत वापस लौट आएगी और शायद वे लोग, जिन्होंने कहना शुरू किया था कि भारत में लोकतंत्र समाप्त हो गया है, उनको अपनी बातें वापस लेनी पड़ेंगी। इस चुनाव ने एक बात पूरी तरह साबित कर दी है कि भारत में लोकतंत्र सही सलामत है और जो शक्ति जनता में हमेशा रहती है लोकतांत्रिक देशों में, वह उनके पास लौट आई है। मोदी के दूसरे दौर में अक्सर लगता था कि एक ही व्यक्ति के हाथ में थी इस देश की बागडोर और यही ले रहा था देश के सबसे अहम फैसले। जब इस तरह का तंत्र आता है किसी देश में, तो उसको लोकतंत्र नहीं तानाशाही कहा जाता है। मोदी पर जिस अंकुश की जरूरत थी, वह अब लग गया है। यह अच्छी बात है।

संवेदना का आनंद-रस

साहित्य
सदाशिव श्रोत्रिय

> कविता का आनंद उससे बाहर रह कर नहीं उठाया जा सकता और कविता के मर्म में प्रवेश तभी संभव है, जब पाठक स्वयं भी उस भाव के प्रति संवेदनशील हो, जिसे वह कविता व्यक्त कर रही है। कविता का संपर्क इस तरह पाठक की संवेदना का परिष्कार करता चलता है। अगर हम अपने समाज को परिष्कृत अभिरुचियों वाले लोगों का समाज बनाना चाहते हैं, तो हमें निश्चय ही हमारे समय की श्रेष्ठ कविता के पास जाना होगा।

जब मानव जीवन की तमाम उपलब्धियों को केवल भौतिक उपलब्धियों के रूप में देखा जाने लगा हो, तब कविता की उपयोगिता के बारे में निश्चय ही कई तरह के सवाल उठाए जा सकते हैं। कोई आश्चर्य नहीं, अगर इन सवालों के मनमाने जवाब देने के बाद हमारे शिक्षा-पाठ्यक्रमों से कविता को फालतू चीज मान कर बिल्कुल हटा ही दिया जाए। कविता वैसे भी अब हमारी बोलचाल में, हमारे सांस्कृतिक पर्यावरण में छीजती जा रही है, इसलिए संभव है कि किसी दिन हमारी भाषा पूर्णतः काव्य-शून्य और परिणामस्वरूप सर्वथा रसशून्य हो जाए। शास्त्रीय संगीत के प्रेमी श्रोताओं की संख्या जिस तरह दिन-ब-दिन कम होती जा रही है, उसी तरह हो सकता है, अच्छी और प्रभावोत्पादक कविता के प्रेमी भी धीरे-धीरे अंगुलियों पर गिनने लायक ही रह जाएं।

अगर किसी दिन ऐसा होता है, तो यह समूची मानवता के लिए सचमुच बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण होगा, क्योंकि कविता की रचना हमेशा किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा ही संभव होती है, जो सामान्य जन की तुलना में बहुत अधिक संवेदनशील रहा हो। कविता के संदर्भ में हम बार-बार महर्षि वाल्मीकि को याद करते हैं, जिनका विरल गुण एक मिथुनरत क्रौंच-युगल के एक व्याध द्वारा तीर से बींध दिए जाने पर ऐसी करुणा से भर जाना था, जो तुरंत काव्य-रूप में फूट पड़ी थी। हर तरह की कविता अंततः हर्ष-विषाद, प्रेम-घृणा, वैराग्य, वितृष्णा, कुंठा, शोक, निराशा, हताशा, ऊब, भक्ति, उल्लास, समर्पण, त्याग, उदारता, करुणा, उत्सर्ग जैसे भावों या उनके अनेकानेक यौगिकों की अभिव्यक्ति ही तो साबित होती है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जो वास्तव में कवि है, वह किसी भी मनोभाव को अतिरिक्त संवेदनशीलता के साथ अनुभव करता है और उसकी यह अतिरिक्त संवेदनशीलता ही उसे अपने मनोभावों को एक ऐसे रूप में अभिव्यक्त करने की क्षमता दे देती है, जिसे हम कविता का नाम देते हैं और जिसमें अन्य सहृदय पाठकों या श्रोताओं के मन में पैठ कर वैसा ही मनोभाव पैदा कर सकने की भी एक अद्भुत और अनूठी क्षमता होती है। किसी मनुष्य को अतिरिक्त संवेदनशील बना सकने वाले इस साधन पर यदि मानव की पकड़ धीरे-धीरे छूट जाए तो क्या हम इसे मानवता की एक बहुत बड़ी हानि के रूप में नहीं देखेंगे!

जो गलत हो रहा है, उसके बारे में अगर हमें अधिकाधिक लोगों को जागरूक करना है, तो यह कविता के जरिए ही संभव है। आज के समय में जो उचित और वरेण्य है, उसके बारे में हमें आज की कविता ही बता सकती है। कविता ने हमेशा वैसा किया है। उसने कुरुक्षेत्र में कर्तव्य से विमुख होते अर्जुन को फिर से उसके प्रति सचेत किया है। कबीर जैसे कवियों की कविता ने इंसान और इंसान के बीच भेद मिटाने का काम कई बार किया है। हमारे पारिवारिक मूल्यों को बचाए रखने का काम रामचरितमानस ने न जाने कितने परिवारों में किया होगा। मातृभूमि के प्रति अपना कर्तव्य भूल रहे लोगों को उसकी याद दिलाने का काम भी कविता ने अनेक बार किया। सांसारिकता में लिपटे लोगों को इस संसार की नश्वरता के बारे में आगाह करने का आवश्यक काम कविता कई तरह से करती रहती है।

हमारे इस विकट समय में लोगों को सही राह दिखाने का काम कर सकने वाली कविता आज भी लिखी जा रही है, पर दुर्भाग्य से उस कविता तक अधिकांश पाठकों-श्रोताओं की पहुंच नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि इस तरह की अच्छी कविता अधिकाधिक लोगों तक पहुंच पाए। ऐसी कविता कभी पाठ्य पुस्तकों का हिस्सा बन कर हमारे करोड़ों विद्यार्थियों तक पहुंचेगी, इस बात की संभावना इस समय बहुत कम है। एक विचित्र बात यह हुई है कि जो आज के सिद्ध और सक्षम कवि हैं, उनकी रचनाओं तक आम आदमी की पहुंच बिल्कुल नहीं है। आज बहुत से अन्य लोग कवि कहलाने की आकांक्षा पाले हुए हैं, जिनका वस्तुतः कविता से कोई लेना-देना नहीं है। ये लोग मोटे तौर पर अत्यंत असंवेदनशील हैं, पर वे साधन-संपन्न तथा प्रभावशाली हैं और बड़ी आसानी से अपनी घटिया पुस्तकों को भी अच्छी कविता पुस्तकों के बीच रखवा सकते हैं। इनमें से कुछ लोग तो अपनी घटिया कविताओं को स्कूलों के पाठ्यक्रमों में भी शामिल करवा सकते हैं। कचरे के ढेर में दबी हुई अच्छी कविता पर इस तरह पाठक की नजर ही नहीं पड़ पाती और वह उस शक्तिशाली कविता से रूबरू होने से वंचित रह जाता है, जो उसकी संवेदना को धार दे सके या उसे परिष्कृत कर सके।

कविता का आनंद उससे बाहर रह कर नहीं उठाया जा सकता और कविता के मर्म में प्रवेश तभी संभव है, जब पाठक स्वयं भी उस भाव के प्रति संवेदनशील हो, जिसे वह कविता व्यक्त कर रही है। कविता का संपर्क इस तरह पाठक की संवेदना का परिष्कार करता चलता है। अगर हम अपने समाज को परिष्कृत अभिरुचियों वाले लोगों का समाज बनाना चाहते हैं, तो हमें निश्चय ही हमारे समय की श्रेष्ठ कविता के पास जाना होगा।

फिर वही सरकार लाया हूं!

बाखबर
सुधीश पचौरी

> पल-पल बढ़ता संदेह कि कब तक चलेगी ऐसी सरकार, कि कब तक 'पलटूराम' नहीं मारेंगे 'पलटी', कि कैसे होगी 'अल्पसंख्यकों' को चार फीसद आरक्षण देने की मांग पर 'सहमति', कि 'अग्निवीर' और 'यूसीसी' पर पुनर्विचार, कि किस-किस को क्या-क्या दोगे महाराज।

चार जून की शाम! वही भाजपा मुख्यालय! वही नायक! वही समर्थक! एक हारी हुई खुशी चेहरों पर। न पहले वाला जोर, न पहले जैसा जोश, फिर भी 'विजयोत्सव' का माहौल और मोदी का संबोधन, कि 'मंगल' का दिन और 'मंगल भवन अमंगल हारी' वाला भाव। 'ऐतिहासिक जीत' और तीसरी बार फिर 'एनडीए गठबंधन' की सरकार।

पैनलों में, एक कहे उसकी कटी, दूसरा कहे उसकी मुझसे ज्यादा कटी, सभी कहें सभी की कटी, फिर भी एक खिसियाहट भरी मुस्कान सबके चेहरे पर कि उसकी मेरे से ज्यादा कटी, हा... हा... हा।

बहसों में सब एक-दूसरे की मायूसी को देख खुश दिखते। एक कहता कि कहां हुए 'चार सौ पार', बल्कि हो चुकी है 'नैतिक हार' तब 'काहे बनाते सरकार'। तो, जवाब आता कि भले नहीं 'चार सौ पार' लेकिन फिर भी 'यह है ऐतिहासिक जीत' और 'तीसरी बार फिर मोदी सरकार।'

जनता दिखा चुकी सबको उनकी औकात, फिर भी बहसों में छाया रहा अहंकार और दुरहंकार।

एक ओर नई गठबंधन सरकार बनाने की कवायद और हर पल संशय कि 'बकरा किस्तों में कटेगा, कि कटेगा एक झटके में?'

बहसों में 'हार' का 'कारण विचार' कि 'चार सौ पार' ने जा पाने का असली कारण 'भितरघात', कि 'गद्दारों की गद्दारी', कि भाजपा की 'अंतर्कलह', कि भाजपा द्वारा 'बाहर वालों को टिकट देने से पुराने कार्यकर्ताओं में नाराजगी', कि भाजपा द्वारा अपने को 'इंडिपेंडेंट' दिखाने से 'संघ नाराज और अक्रिय', कि विपक्ष के छापामार हमले कामयाब, कि उलटा पड़ा 'अबकी बार चार सौ पार' का बड़बोलापन, कि विपक्ष का 'नैरेटिव' कामयाब, कि 'चार सौ पार' तो संविधान खत्म, जनतंत्र खत्म, चुनाव खत्म और 'संविधान व जनतंत्र बचाओ' की पुकार, कि 'बेरोजगारी, महंगाई' की मार, कि अग्निवीर योजना की अव्यावहारिकता से हाहाकार, कि 'अल्पसंख्यकों' ने विपक्ष को जिताया, कि 'दलितों' ने जिताया, कि 'वृषी के दो लड़कों' ने हराया, कि बंगाल में ममता का 'खेला' एक बार फिर चला।

मगर, 'मार खा रोई नहीं' की मुद्रा वाले नेता कहिन कि सब मिलकर करेंगे विचार कि कैसे न हो पाए 'चार सौ पार', फिलहाल बनाने दो तीसरी बार मोदी की एनडीए सरकार।

और पल-पल बनती सरकार और पल-पल बढ़ता संदेह कि कब तक चलेगी ऐसी सरकार, कि कब तक 'पलटूराम' नहीं मारेंगे 'पलटी', कि कैसे होगी 'अल्पसंख्यकों' को चार फीसद आरक्षण देने की मांग पर 'सहमति', कि 'अग्निवीर' और 'यूसीसी' पर पुनर्विचार, कि किस-किस को क्या-क्या दोगे महाराज। कई कहें कि बेहतर हो न बनाओ ये सरकार। लेकिन जवाब आता कि हमें तो बनानी है तीसरी बार मोदी सरकार। जनादेश मिला है कि बनाओ मोदी सरकार।

लेकिन ऐसी ही रही खींचतान, तो बन ली सरकार और बन भी गई, तो सवाल कि कब तक चलेगी ऐसी सरकार। और तब तो बन लिया विकसित 'भारत महान'!

इधर बनती सरकार, उधर सुल्तानपुर से लेकर सहारनपुर तक में उपद्रव की खबरें। इधर बनती सरकार कि उधर चंडीगढ़ हवाई अड्डे पर सीआइएसएफ की एक अफसर द्वारा नई चुनी भाजपा सांसद कंगना रनौत के गाल पर थप्पड़ और जब कंगना पूछीं कि क्यों मारा, तो कहिन कि मेरी मां किसान धरने पर थी, तबके तेरे बयान के लिए मारा।

एक चैनल पर चलती चर्चा में जब एंकर ने इसे गलत कहा, तो एक 'विपक्षी' ने कहा कि यह तो 'डिस्सेंट' है, 'असहमति' है।

फिर एक शाम विपक्ष के एक बड़े नेता ने एक प्रेस वार्ता के जरिए आरोप लगाया कि देश के दो बड़े सत्तासीन नेताओं ने अपने बयानों से 'शेयर मार्केट' को 'मैनीपुलेट' किया, जबकि जानते थे कि सरकार नहीं बन रही, मतदान पश्चात सर्वेक्षणों और कुछ चैनलों की मिलीभगत से भी 'शेयर बाजार' को 'मैनीपुलेट' किया गया। संयुक्त संसदीय समिति जांच करे।

जब एक महिला पत्रकार ने सवाल किया कि हर बार जेपीसी की मांग होती है, हर बार संसद का सत्र बेकार हो जाता है, तो तुरंत कटाक्ष आया कि यह भाजपा की लाइन है।

कुछ देर बाद ही, सत्तापक्ष के एक बड़े नेता ने साफ किया कि यह सब बदनाम और जनता को गुमराह करने की कोशिश है।

बहरहाल, पुराने संसद भवन में एक बार फिर कुछ पुराने सदाबहार 'मोदी मोदी' वाले 'ताली मार' दृश्य दिखे। राजग के नए सांसदों की बैठक में मोदी के स्वागत में घटक दलों के सभी नेताओं ने मोदी को सर्वसम्मति से अपना नेता चुनते हुए उनकी जैसी प्रशंसा की, वह अभूतपूर्व दिखी और मोदी भी अपने भाषण में 'वीढ्या भाव' में दिखे। उन्होंने 'चार सौ पार' न पाने की 'हताशा' को 'आशा' में बदल दिया। उन्होंने कहा कि यह 'एनडीए' की 'महाविजय' है! न हम हारे थे न हारे हैं।

जो कहते थे कि 'चार जून को मोदी पीएम नहीं रहेंगे', उन्हीं के लिए मानो मोदी ने कहा कि फिर वही सरकार लाया हूं।

तोड़ते रहें जीवाणु का घेरा

हमारे आसपास हर समय बैक्टीरिया यानी जीवाणुओं का घेरा सक्रिय रहता है। जब हम बाहर से कुछ खरीदते हैं, सार्वजनिक वाहनों से सफर करते हैं, भीड़भाड़ वाली जगहों पर चल रहे होते हैं, तो सेहत के लिए हानिकारक बैक्टीरिया के संक्रमण का खतरा अधिक रहता है। जब भी मौसम में उतार-चढ़ाव आता है, तो ऐसे बैक्टीरिया कुछ अधिक तेजी से पनपने शुरू हो जाते हैं। अगर थोड़ी सावधानी बरतें तो हानिकारक बैक्टीरिया के संक्रमण से आसानी से बचा जा सकता है।

बैग आदि की सफाई

हम अपने कपड़ों को तो एक-दो बार पहनने के बाद धोने डाल देते हैं। मगर ऐसी कई चीजें हैं, जिनका इस्तेमाल हर समय करते हैं या जब भी बाहर निकलते हैं, तो उन्हें साथ रखते हैं, उनकी सफाई पर कम ही ध्यान देते हैं। जिस तरह हमारे कपड़ों पर बाहर का बैक्टीरिया चिपक कर नुकसान पहुंचा सकता है, उसी तरह हमारे बैलै, घड़ी, पर्स, मोबाइल फोन, जूते वगैरह पर भी बैक्टीरिया चिपकता है। इसलिए कपड़ों के साथ-साथ इन सारी वस्तुओं की सफाई का भी ध्यान रखना बहुत जरूरी होता है। हर हफ्ते बैग की सफाई जरूर करें। अगर सफाई नहीं कर पा रहे हैं, तो सेनेटाइजर का छिड़काव कर सकते हैं। मोबाइल फोन को तो रोज ही गीले कपड़े पर सेनेटाइजर डाल कर एक बार अवश्य साफ करना चाहिए, क्योंकि फोन को हम दिन में अनेक बार इस्तेमाल करते हैं और उसके जरिए हमारे नाक और मुंह के रास्ते बैक्टीरिया शरीर में प्रवेश कर सकते हैं।

बैठने की जगह की सफाई

अक्सर हम घर या दफ्तर की जिन कुर्सियों-सोफों पर बैठते हैं, उनकी गद्दियों की सफाई का ध्यान नहीं रखते। उन गद्दियों में भी बैक्टीरिया पैदा होते रहते हैं। इसलिए थोड़े-थोड़े दिन पर कुर्सियों की पी धुलाई कराते रहना चाहिए। बैठने की जगह पर मेज, की-बोर्ड, माउस, कंप्यूटर स्क्रीन आदि की भी नियमित सफाई करते रहना चाहिए।

मास्क का उपयोग

कोरोनाकाल में मास्क पहनना अनिवार्य किया गया था, तब यह लोगों की आदत में शामिल हो गया था। मगर जैसे ही कोरोना का खतरा टला, यह आदत भी हमने भुला दी। मगर यह नहीं भूलना चाहिए कि कोरोना के अलावा भी कई तरह के जीवाणु और विषाणुओं का खतरा हमेशा बना रहता है। इसलिए जब भी भीड़भाड़ वाली जगहों पर जाएं, गंदगी वाली जगहों से गुजरना पड़े, सार्वजनिक वाहनों में सफर करें, तो मास्क अवश्य पहनें। इससे मौसम के उतार-चढ़ाव के चलते पैदा होने वाले बैक्टीरिया के खतरे से बचा जा सकता है।

हाथ-मुंह की सफाई

जब भी बाहर से आएं या घर से दफ्तर पहुंचें,

नुस्खे

तो सबसे पहले साबुन से हाथ-मुंह अवश्य धोएं। इस तरह हाथों में चिपके जीवाणु समाप्त हो जाएंगे और सर्दी, खांसी, जुकाम जैसी मौसमी समस्याओं का खतरा भी टल जाएगा। गरमी के मौसम में धूल-मिट्टी बहुत उड़ती है, उसमें अनेक प्रकार के जीवाणु हो सकते हैं। उनके संक्रमण बचाव का सबसे प्रभावी तरीका यही है कि हाथ-मुंह धोते रहें। इससे गर्मी से भी राहत मिलेगी और साफ-सफाई का एक जरूरी काम भी हो जाएगा।

किताबें मिलीं

स्वाधीनता के बाद के हिंदी नाटक

स्वाधीनतोत्तर हिंदी नाटकों में लोकतांत्रिक मूल्य' नामक यह प्रबंध केवल लोकतंत्र ही नहीं, भारतीय दर्शन, संस्कृति और समाज जीवन का उद्गाता है। तर्क, विचार, कल्पना, यथार्थ और मेधा से आपूरित इस प्रबंध में लोक-उपास्य विचारों का प्रवाह साहित्य के दोनों ही कूलों को समृद्ध करता हुआ समर्पित-भाव से आगे बढ़ता है, तभी कला और भाव दोनों ही सहज रूप से मिलकर समष्टि का यशगान करते हैं। भाषा के लालित्य के साथ-साथ भूलोक और भूगोल को तत्सम और तद्भव की भांति देखते हुए डा ब्रह्मदत्त अवस्थी ने राजनीति विज्ञान, समाज विज्ञान, दर्शन, अर्थशास्त्र और विधि को विधाता की कृपा से मथकर हिंदी साहित्य की सुरसरि में भाव-सुमनों को इस प्रकार उड़ेला है कि अमृत-तत्त्व की अनुभूति कहीं दूर नहीं, बस आचमन भर करना है। हिमालय को ऊंचाई गहरे सागरों ने ही दी है। इस पर सजी धवल श्वेत हिमराशियां उसे ऋषि की भांति स्थापित कर देती है, जिसकी छांह में पलते हैं सभी लोकवासी। अवस्थी के इस साहित्यिक शोध-प्रबंध में लोक उभर कर सामने आया है, जहां भूगोल उसकी शिराओं में लावे की भांति दहक रहा है और भारत भूमि को उर्वरा बना रहा है।

स्वाधीनतोत्तर हिंदी नाटकों में लोकतांत्रिक मूल्य; ब्रह्मदत्त अवस्थी, नार्दर्न बुक सेंटर, 4221/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 2000 रुपए।

मोहब्बत की दुकान

यशवंत व्यास मूलतः व्यंग्यकार हैं। व्यंग्यकार हर चीज में व्यंग्य की वस्तु तलाश लेता है। इस किताब का शीर्षक एक राष्ट्रीय पार्टी के बड़े नेता का दिया हुआ नारा भी है। इसलिए पहली नजर में ऐसा आभास हो सकता है कि किताब में राजनीतिक विश्लेषण हो सकता है। मगर, इसमें न केवल व्यंग्य के नश्तर हैं, बल्कि शिल्प के रूप में अनोखा प्रयोग भी। किताब की 'कैच लाइन' है- 'जुमलों के दौर की जानलेवा कहानियां'। इसरो किताब के व्यंग्य की धार का अंदाजा लग जाता है। व्यंग्य का रंग कहानियों की शक्ल में ही खुलता है। यशवंत व्यास ने इन कहानियों को बुनने के लिए ज्यादातर प्रचलित कथाओं के पात्रों को उपादान बनाया है। उनमें रोमियो-जूलियट, शीरीं-फरहाद, लैला-मजनूं, हीर-रांझा, ढोला-मारू प्रमुख हैं। कथा की पृष्ठभूमि में समकालीन राजनीति की गूंज स्पष्ट सुनाई देती है। उन्हें पढ़ी हुए हमारे समय की राजनीति के प्रमुख किरदार साफ नजर आते हैं, मगर कहीं भी वे प्रकट नहीं है।

यही इस किताब की खूबी है कि प्रतीकों और बिंबों के जरिए अपने समय की राजनीति को खोलती है। राजनीति, परिवार और पड़ोस के वातावरण से ही व्यंग्य की ज्यादातर वस्तु जुटाई जाती रही है। इस अर्थ में इस किताब की भूमि नई नहीं कही जा सकती, पर इसका नयापन इसकी कथन-भंगिमा में है। छोटे-छोटे वाक्य, छोटे-छोटे कथन, मगर पूरी कथा। एक-एक वाक्य के बड़े-बड़े दृश्य। भाषा में काव्यात्मक लय। जगह-जगह शेरो-शायरी की छौंक। मगर तीखापन भरपूर। ठीक निशाने पर लगते तीर। एक अलग तरह के स्वाद के साथ उपस्थित है यह किताब।

मोहब्बत की दुकान: यशवंत व्यास; डब्लूडब्लूडब्लू खटाक डाट काम और अमेजन पर उपलब्ध; 160 रुपए।

रोजनामचा एक कवि-पत्नी का

लेखकों की पत्नियों की लिखी डायरियां केवल उनके जीवन से जुड़े दुख-सुख का दस्तावेज नहीं होतीं। उनमें संबंधित लेखक के पारिवारिक जीवन के बही-खाते भी खुलते हैं। लेखक के सार्वजनिक जीवन से अलग, उसकी नितांत निजी दुनिया, जिसमें वह खाता-पीता, रहता, बोलता-बतियाता, परिवार के लोगों के साथ सुख-दुख साझा करता, गृहस्थी को साधता है। आमतौर पर लेखकों को घर-गृहस्थी के प्रति लापरवाह और अपनी किताबी दुनिया में रमा हुआ देखा जाता है। इसमें उनकी पत्नियां बहुत कुछ झेलती हैं। परिवार को सहेजने, संभालने, संवारने, बच्चों की देखभाल, उनकी शिक्षा-दीक्षा, गृहस्थी की जरूरतों आदि को व्यवस्थित करने के लिए उन्हें ही खपना पड़ता है। इस तरह उनके रोजनामचे लेखकों के व्यक्तित्व को भी खोलते हैं। अनेक रचनाकारों की पत्नियों ने अपनी डायरियों, पुस्तकों में लेखकों के बारे में बहुत कुछ लिखा है। शिवरानी देवी की किताब 'प्रेमचंद: घर में' से प्रेमचंद के व्यक्तित्व के अनेक अनछूए पहलू उजागर हुए।

ऐसी अनेक किताबें लेखक-पत्नियों की आई हैं।

इन्हीं किताबों की शृंखला में कवि उद्भ्रांत की पत्नी उषा शर्मा की किताब 'रोजनामचा एक कवि-पत्नी का' आई है। हालांकि यह किताब उद्भ्रांत पर केंद्रित नहीं है। यह एक डायरी की शक्ल में लिखी गई है, जिसमें कवि-पत्नी ने अपनी गृहस्थी और अपने निजी जीवन के रोजमर्रा अनुभवों को दर्ज किया है। इस तरह यह डायरी घर-गृहस्थी में रमी हर स्त्री की डायरी बन जाती है। इसमें कहीं भी यह अभिमान नहीं कि वह जो कुछ लिख रही है, वह एक कवि-पत्नी के रूप में लिख रही है और उसका कोई साहित्यिक मोल भी हो सकता है। इस तरह इस डायरी को अगर कवि उद्भ्रांत की पत्नी की डायरी के रूप में न पढ़ कर एक स्त्री की डायरी के रूप में पढ़ें, तो इसकी अर्थवत्ता कहीं कम नहीं होती, और बढ़ जाती है।

रोजनामचा एक कवि-पत्नी का: उषा शर्मा; रश्मि प्रकाशन, महाराजापुरम, केसरीखेड़ा रेलवे क्रासिंग के पास, कृष्णा नगर, लखनऊ; 200 रुपए।

बच्चों के संसार में आनंद की खोज

बच्चे जैसे ही किशोरावस्था में पहुंचते हैं, तभी से उन्हें अपने लिए आसपास ऐसे स्वर सुनाई देने शुरू कर देते हैं कि क्या बच्चों की तरह जिद कर रहे हो... बच्चों की तरह क्यों रो रहे हो... अब तुम बड़े हो रहे हो, बच्चों की तरह हरकतें मत करो... आदि। इस तरह की बातों या प्रतिक्रियाओं से जो जो मानस तैयार होता है, वह बाद में व्यक्ति को खुद को इस तरह के भाव के दायरे में कैद कर देता है कि अब उसे कुछ करते हुए बच्चों की तरह नहीं दिखना है। यही भाव एक अलग दायरे में उसे जरूरी वक्त पर हंसने-खेलने से भी रोकता है। मसलन, अगर कभी किसी युवक को परिवार या आस-पड़ोस के लोगों के बीच छोटे बच्चे की तरह खेलने-कूदने की मन करे, तो वह सिर्फ इसलिए ऐसा नहीं करेगा कि लोग उसे बच्चा कह कर हंसेंगे।

जीवन शैली

बच्चों की तरह जीवन

इस भाव का असर बाद में यहां तक देखा जा सकता है कि जब हम सामाजिक परिभाषा के अनुसार बड़े हो जाते हैं, तब बड़ों के लिए अपेक्षित व्यवहारों के अनुकूल बर्ताव करने लगते हैं। जब खुश होकर खेलने-कूदने का कभी मन किया, तो इसलिए ऐसा नहीं करेंगे कि तुरंत आसपास से कोई कह उठेगा कि देखो... बच्चों की तरह करता है। जबकि जीवनशैली में रस घोलने का यह अच्छा तरीका हो सकता है कि हम बच्चों की मासूम गतिविधियों को देखें, उनके खुश होने के लिए की गई हरकतों को देखें और फिर अपनी खुशियों के स्तर का चुनाव करें। बच्चे जब खेल-कूद रहे होते हैं, तब उन्हें किसी की फिक्र नहीं होती कि उन्हें क्या कहा जाएगा। मनाही एक सामाजिक आग्रह है, लेकिन वे अपनी खुशी के लिए मौकों को खोजते नहीं हैं, बल्कि चुन लेते हैं।

संवाद का रास्ता

तो हमारे बड़े होने का मतलब नहीं है कि हमारे भीतर से जीवन-तत्त्व को बाहर करने में हम खुद ही अपनी भूमिका निभाएं। जब जीवन का आनंद चुनने का मन हो, तब बच्चों के साथ खेलने-कूदने से लेकर उनसे उनके स्तर पर जाकर संवाद करने से भी नहीं हिचकना चाहिए। इससे न केवल हम अपने आसपास के बच्चों के लिए आनंद और सीखने का एक स्रोत बनेंगे,

> ***बच्चों के साथ खेलना उनके आगे के जीवन के लिए एक प्रशिक्षण हो सकता है, जो किसी औपचारिक कक्षाओं से नहीं मिल सकता।***

बल्कि खुद को भी तनाव और मानसिक परेशानियों से दूर करने का इंतजाम करेंगे। बल्कि बच्चों की तरह खेलना हमें कई बार ऐसी खुशी देता है जो हमें दूसरी समस्याओं से लड़ने के लिए ताजगी भी प्रदान कर सकता है।

जीवन का प्रशिक्षण

बच्चों के साथ खेलना बच्चों को उनके आगे के जीवन के लिए एक प्रशिक्षण हो सकता है, जो किसी औपचारिक कक्षाओं से नहीं मिल सकता। यों भी औपचारिकता जितना बच्चों के लिए बोझ होता है, बड़ों के लिए भी लगातार औपचारिकता की स्थितियां भारी ही हो जाती हैं, जिसमें मन कई बार खुद को ढोता दिखता है। इसलिए बच्चों के साथ खेलना आज के दौर में कामकाज में लगातार व्यस्तता की वजह से रोजमर्रा की बोझिल होती जिंदगी में ताजगी का एक झोंका हासिल करना होता है।

संतुलित हो वजन स्वस्थ रहे तन-मन

शरीर का वजन हल्का हो तो सेहत और फुर्ती बनी रहती है, लेकिन अगर वजन बढ़ाने की कोशिश में वजन जरा-सा बेलगाम हुआ नहीं कि समस्याओं की शुरुआत हो जाती है। बाजार के प्रचार में जिन वस्तुओं को बहुत फायदेमंद बताया जाता है, उसे लोग स्वस्थ होने के मकसद से तुरंत शुरू तो कर देते हैं, मगर शरीर की जरूरत के मुताबिक वह कई बार अनुकूल साबित नहीं होती। यह बेवजह नहीं है कि आज बहुत सारे लोगों के बीच वजन बढ़ना और उसे नियंत्रित नहीं कर पाने की वजह से मोटापे की चपेट में आ जाने की समस्या आम होती जा रही है। मुश्किल तब पैदा होती है जब शरीर में कई ऐसे रोग उभरने लगते हैं, जिनके इलाज में हम अपना धन, समय और चैन खत्म करते रहते हैं, मगर उसकी जड़ छिपी होती है हमारे मोटापे में। मोटापा कई स्तर पर शरीर के समूचे स्वास्थ्य को और यहां तक कि मानसिक सेहत को भी नुकसान पहुंचा सकता है।

सेहत

हड़बड़ी की राह

जब परेशानी बढ़ने लगती है, तब जाकर हम अचानक ही कई स्तरों पर अपने सेहत को ठीक करने के क्रम में मोटापे पर गौर करते हैं और फिर अचानक ही कई नुस्खे आजमाना शुरू कर देते हैं। मसलन, किसी नीम हकीम की सलाह पर भोजन को पूरी तरह नियंत्रित कर देते हैं, घंटों व्यायाम करना शुरू कर देते हैं। जबकि ये उपाय जरूरी होते हुए भी तब सही हैं, जब संतुलित और निर्धारित तरीके से इन पर अमल किया जाए। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि अगर मोटापे को नियंत्रित न किया जाए तो कई तरह की बीमारियां शरीर में घर बना ले सकती हैं।

नियंत्रण की फिक्र

मोटापे का एक प्रत्यक्ष नतीजा मधुमेह होता है। शरीर में रक्त ग्लूकोज का सामान्य स्तर सत्तर से एक सौ बीस मिलीग्राम/डीएल से अधिक नहीं होना चाहिए, लेकिन कई बार मोटापे के कारण यह बढ़ जाता है। इससे टाइप-2 मधुमेह होने का खतरा पैदा हो जाता है। दरअसल, मोटापा 'फैटी एसिड' में बढ़ोतरी का कारण है, जो इंसुलिन प्रतिरोध को प्रभावित करता है। ऐसे में अगर मोटापे को नियंत्रित न रखा जाए तो मुश्किल बढ़ सकती है। इसी तरह, उच्च रक्तचाप, गहरी नींद में बाधा, मस्तिष्क आघात, यकृत को खतरा जैसी कुछ अन्य अनचाही स्थितियां और कई जटिल बीमारियां भी मोटापे की जड़ से शुरू हो सकती हैं। समस्या तब और ज्यादा गहरा जाती है, जब मोटापा और उसके प्रति सामाजिक दृष्टि की वजह से कुछ लोग अवसाद व मानसिक परेशानियों से घिर जाते हैं।

नीम-हकीमी

आमतौर पर अनदेखी की वजह से इस समस्या से घिरे लोगों को जब पता चलता है तब वे आनन-फानन में इसके समाधान की कोशिश करने के क्रम में कुछ ऐसे उपाय अपनाते हैं, जो उनकी सेहत के लिए अन्य तरह से नुकसानदेह होते हैं। खानपान की आदत में सुधार की कोशिश में कुछ लोग जिस तरह भूखे रहने के विकल्प को चुनते हैं, उससे कमजोरी के साथ-साथ अन्य रोगों के और जटिल होने की आशंका पैदा हो जाती है। जबकि बाजार के तैलयुक्त और फास्ट फूड जैसे चर्बी बनाने वाले खाद्य पदार्थ के बजाय संतुलित और पोषणयुक्त भोजन इसमें मददगार बन सकता है। इसके अलावा, चर्बी को कम करने के लिए तेज गति से टहलना, साइकिल चलाना, तैरना और अलग-अलग तरीके से कैलोरी को नियंत्रित करने वाले खेल खेलना जरूरी है। कुछ अपने शरीर की सुविधा के मुताबिक चर्बी घटाने वाले कुछ व्यायाम भी किए जा सकते हैं। वैसे तो किसी कुशल चिकित्सक की निगरानी में अन्य जरूरी उपाय भी किए जा सकते हैं।

(यह लेख सिर्फ सामान्य जानकारी और जागरूकता के लिए है। उपचार या स्वास्थ्य संबंधी सलाह के लिए विशेषज्ञ की मदद लें।)

व्यंजन मजेदार, भरवां की बहार

भरवां परवल

परवल देश के हर हिस्से में खाया जाता है। यह पोषण से भरपूर होता है। इसका स्वाद लाजवाब होता है। इसकी सब्जी बनाने के कई तरीके हैं। कुछ लोग इसे रसेदार बनाते हैं, तो कुछ भुजिया के रूप में। मगर भरवां परवल का आनंद ही अलग होता है। यों तो भरवां सब्जियों को सूखी सब्जी की तरह ही खाना अच्छा लगता है, मगर भरवां परवल को तरीदार भी बनाया जा सकता है। इसे बनाना कोई मुश्किल काम नहीं।

सामग्री

परवल: ढाई सौ ग्राम, भरावन के लिए- उबला आलू: एक, पनीर: डेढ़ सौ ग्राम, हरा धनिया, हरी मिर्च, तरी के लिए- प्याज: दो, टमाटर: दो, मसाले- रोजमर्रा उपयोग होने वाले मसाले, गरम मसाला, धनिया पाउडर, लाल मिर्च पाउडर।

विधि

परवल को धोकर उसके दोनों सिरों को काटें और बीच में चीरा लगा कर गूदा बाहर निकाल दें। आलू और पनीर को कद्दूकस कर लें। परवल के गूदे को खरल में कूट कर या ग्राइंडर में चला कर एकसार कर लें ताकि उसके बीज पिस जाएं। अब कड़ाही में एक चम्मच तेल गरम करें। उसमें जीरा, अजवाइन और थोड़ी सौंफ चटकाएं और पहले परवल के गूदे को डाल कर चलाते हुए पकाएं। आंच बंद कर दें। ऊपर से आधा छोटा चम्मच धनिया पाउडर, चौथाई चम्मच गरम मसाला और चौथाई चम्मच कुटी लाल मिर्च डाल कर अच्छी तरह मिलाएं। अब कद्दूकस किया हुआ आलू और पनीर उसमें डालें और चलाते हुए अच्छी तरह मिला लें। थोड़ा धनिया पत्ता, अदरक और दो हरी मिर्च बारीक काट कर मिलाएं। भरावन तैयार है। इस भरावन को खोखल किए परवल में भर कर ठीक से बंद कर दें। कड़ाही में तीन-चार चम्मच तेल गरम करें। आंच धीमी रखें और परवल का कटा हुआ हिस्सा ऊपर की तरफ करके सारे परवल उसमें रख दें। कड़ाही पर ढक्कन लगा दें। थोड़ी-थोड़ी देर में पलट कर परवल को सब तरफ से सेंक लें। ध्यान रखें कि भरावन बाहर न निकलने पाए। भरवां परवल तैयार है। इसे इसी रूप में परोस सकते हैं। इसी को तरीदार बनाने के लिए प्याज-टमाटर की गाढ़ी तरी बनाएं और उसमें भरे हुए सिंके परवल डाल दें। रोटी या परांठे के साथ परोसें।

रसोई

भरवां टमाटर

भरवां टमाटर का मजा ही अलग होता है। इसे बनाना कोई कठिन काम नहीं।

सामग्री

टमाटर: छह, प्याज: दो, लहसुन की कलियां: छह-सात, उबला आलू: एक, पनीर: डेढ़ सौ ग्राम, मसाले: रोजमर्रा इस्तेमाल होने वाले, सजावट के लिए: धनिया पत्ता, हरी मिर्च, अदरक

विधि

सबसे पहले भरावन तैयार करें। इसके लिए आलू और पनीर को मसल या कद्दूकस कर लें। कड़ाही में एक चम्मच तेल गरम करके जीरा, अजवाइन और सौंफ का तड़का दें और उसमें कद्दूकस किए हुए आलू-पनीर को डाल कर चलाते हुए तीन-चार मिनट के लिए पकाएं। आंच बंद कर दें और ऊपर से नमक, थोड़ा गरम मसाला, धनिया पाउडर और धनिया पाउडर डाल कर अच्छी तरह चलाते हुए मिला लें। धनिया पत्ता, अदरक और हरी मिर्च बारीक काट कर डालें और अच्छी तरह मिला लें। इस भरावन को अलग रख दें। अब चार टमाटर लें, उसके ऊपर का हिस्सा काट कर अलग करें और चाकू की मदद से सावधानी से उसका सारा गूदा निकाल कर बाहर कर दें। इसी में भरावन भरें। कड़ाही में तीन-चार चम्मच तेल गरम करें। भरा हुआ हिस्सा ऊपर को करके टमाटर को पकने के लिए रख दें। आंच धीमी रखें। थोड़ी-थोड़ी देर में पलट-पलट कर टमाटर को हर तरफ से सेंक लें।

अब दूसरी कड़ाही में दो बचे टमाटर, प्याज और लहसुन की गाढ़ी तरी तैयार करें। इस तरी को हुए टमाटरों के ऊपर डाल दें और तीन-चार मिनट तक पकने दें। रोटी, परांठे या चावल के साथ गरमा-गरम परोसें।

आभियान

"यदि आप हमेशा गुस्सा या शिकायत करते हैं तो लोगों के पास आपके लिए समय नहीं रहेगा।
-स्टीफन हॉकिंग, प्रसिद्ध वैज्ञानिक

amarujala.com
अमर उजाला

गोल चबूतरा

Hindi@mithelesh

■ मिथिलेश बारिया

जब किसी रईस की गाड़ी किसी
गरीब से टकराती है,
तो सबसे पहले इन्साफ मरता है...
जहन में भी एक शाम हो
जाती है...

रोती-बिलखती मां के सामने एक
बदतमीज माइक था,
किसी चैनल को भूख लगी थी
और ये पहला बाइट था...

शर्ट, टोपी, टाई में दिखा डोनाल्ड डक

आज के ही दिन सन 1934 में सबसे पसंदीदा कार्टून चरित्रों में से एक डोनाल्ड डक पहली बार वॉल्ट डिज्नी की 'द साइज लिटिल हेन' में दिखाई दिया था। इसके कथानक में मुर्गी सर्दियों में अपना मक्का बोने के लिए सहायता मांगती है, लेकिन पीटर पिग और डोनाल्ड डक मेहनत से बचने के लिए बहाना बनाते हैं।

झरोखा
09 जून

यह कार्टून फिल्म लघु कहानी 'द लिटिल रेड हेन' नामक एक अमेरिकी कहानी पर आधारित थी, जो कड़ी मेहनत के महत्व के बारे में बात बताती थी। बेहद पसंद किए जाने वाले इस कार्टून में डोनाल्ड डक अपनी ट्रेडमार्क नाविक शर्ट, टोपी और बो-टाई में पहली बार दिखाई दिया था। इस लोकप्रिय कार्टून चरित्र की जिस चीज ने प्रशंसकों को अपनी ओर आकर्षित किया, वह है इसका विशिष्ट-विचित्र लहजा, लेकिन मनमोहक, शरारती और शेखी बघारने वाला व्यवहार। डोनाल्ड डक के पीले-नारंगी बिल वाले मुंह, जीवंत, खुशमिजाज स्वभाव और मुश्किल से समझ में आने वाली बोली ने उसे तुरंत हिट बना दिया। तब से डोनाल्ड डक को अन्य डिज्नी पात्रों की तुलना में करीब 150 कार्टून फिल्मों में अभिनय के लिए जाना जाता है। वह दुनिया में सबसे अधिक प्रकाशित कॉमिक बुक चरित्र भी है।

■ टॉक से सोनू सिंह

एक मशहूर अभिनेत्री और नेता को सीआईएसएफ की महिला जवान एयरपोर्ट पर ड्यूटी के दौरान थप्पड़ मारती है। लोग खुश होकर ताली बजा रहे हैं। क्या लोकतंत्र के लिए यह घटना खतरे की घंटी की तरह नहीं है।

थप्पड़ पर ताली बजाने की जरूरत नहीं

किधर जा रही है हमारी सोच

थप्पड़ उठना मारक नहीं है, जितना कि इस थप्पड़ को लेकर खुश होने वाले लोगों की हंसी। इस तरह की विचारधारा को सिर उठाने के पहले कुचल देने की जरूरत है। देश का हर नेता किसी न किसी के बारे में आए दिन जहर उगलता रहता है। अगर हर नेता की बात पर सुरक्षा बलों के जवान इसी तरह रिएक्ट करना शुरू कर दें तो देश की व्यवस्था का क्या होगा? अपनी ड्यूटी निभाते हुए यह करना क्या उचित है? क्या इसको बढ़ावा देना उचित है? क्या कल को और किसी नेता या पब्लिक फिगर पर हाथ उठेगा, जिसको लेकर कोई न कोई सुरक्षाकर्मी गुस्से में होगा? महिला कांस्टेबल कुलविंदर कौर का थप्पड़ उतना मारक नहीं है, जितना कि इस थप्पड़ को लेकर खुश होने वाले लोगों की हंसी।

शर्मिंदगी और हैरानी इस बात की है कि यह काम सीआईएसएफ की सुरक्षाकर्मी ने किया है, जो लोगों की सुरक्षा के लिए होती हैं। क्या यह कंगना के खिलाफ चंडीगढ़ एयरपोर्ट पर प्लांड अटैक है? सांसद पर चंडीगढ़ एयरपोर्ट पर हुआ हमला बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है, खासकर एक सुरक्षाकर्मी द्वारा, जिस पर सुरक्षा का जिम्मा होता है। अपनी शिकायत को रखने के और भी सभ्य तरीके होते हैं। भारतीय राजनीति और सामाजिक जीवन में हम अक्सर इस तरह की घटनाओं के बारे में सुनते हैं।

चिट्ठी 1

सीआईएसफ की कांस्टेबल का कहना है कि कंगना ने किसान आंदोलन के खिलाफ बोला था और उस आंदोलन के दौरान उसकी मां भी धरने पर बैठी थी। यह गुस्से में थी और सीआईएसफ की इस कांस्टेबल ने चंडीगढ़ एयरपोर्ट पर कंगना पर हमला कर दिया। यह कहां तक उचित है? जो लोग इसे सही ठहरा रहे हैं, वे यह समझ लें कि व्यक्तिगत सोच और विचारधारा आपकी ड्यूटी के बीच में नहीं आनी चाहिए।

देशभर में दर्जनों नेता हैं, जो किसी न किसी के खिलाफ बोलते आए हैं। कभी सिक्योरिटी के दौरान किसी सैनिक की भावना उसकी ड्यूटी के बीच आ गई तो? ऐसे लोगों के खिलाफ अगर हर सुरक्षाकर्मी सिक्योरिटी के दौरान अपनी भावनाएं दिखाने लगा तो बहुत बड़ी दिक्कत हो जाएगी। मुझे तो यह समझ नहीं आ रहा है कि लोग कैसे इस महिला के एक्ट को जस्टिफाई कर सकते हैं। क्या लोग यह भूल गए कि ऐसे ही सुरक्षा कर्मचारियों की भावनाएं उनकी ड्यूटी के बीच आ गई थीं, जिसकी वजह से इंदिरा गांधी की हत्या हुई। हिंसा की भर्त्सना बिना शर्त जब तक नहीं की जाएगी, तब तक उसके लिए कोई औचित्य तलाशा जाता रहेगा और वह विचारधारा के आधार पर सही या गलत मानी जाएगी, उसकी पुनरावृत्ति होती रहेगी। सोशल मीडिया पर इस तरह की हिंसा को अगर उत्साह के साथ प्रसारित और प्रचारित किया जाता रहेगा तो इसके दूरगामी प्रभाव होंगे और वह लोकतंत्र के लिए सबसे खतरनाक क्षण होगा।

■ प्रियंका सौरभ, हिसार

भारतीय पेड़ों के प्रति बेरुखी

आज के दौर में हीट वेव का बढ़ना और पर्यावरणीय असंतुलन चिंता का विषय बना हुआ है। यह आमतौर पर जलवायु परिवर्तन, वन्यजीव संरक्षण की कमी, और मानव गतिविधियों के परिणामस्वरूप होने वाले उत्सर्जन के कारण संभव हो रहा है। हीट वेव से तापमान की बढ़ोतरी विभिन्न समस्याओं का कारण बन रही है, जिनमें अत्यधिक गर्मी से होने वाली मौतें भी शामिल हैं। इसलिए, इस समस्या को गंभीरता से लिया जाना चाहिए और संभावित समाधान तलाशा जाना चाहिए, जिनमें भारतीय पारंपरिक पेड़ों नीम, पीपल और बरगद जैसे वृक्ष का रोपण करना शामिल है। इन पेड़ों का महत्व समझाने और उन्हें बचाने के लिए समाज में जागरूकता फैलाना बहुत आवश्यक है। पेड़ों के कटाव का और नए वृक्षों के रोपण का पर्यावरण पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यह एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जो पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने और हीट वेव जैसी चुनौतियों का सामना करने में सहायक हो सकती है। यह एक चिंताजनक तथ्य है कि मुनाफे की खातिर स्थानीय पेड़ों को काटा जा रहा है, क्योंकि विदेशी वृक्ष जल्दी ही उगते हैं साथ ही इन वृक्षों का वाणिज्यिक तौर पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। ये भारतीय आबोहवा और वानस्पतिक जीवन के लिए अधिक अनुकूल होते हैं। पीपल, बरगद और नीम के पेड़ों की यह विशेषता सचमुच महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये पेड़ कार्बन डाईऑक्साइड को अधिकतम मात्रा में अवशोषित करते हैं, जो पर्यावरण के लिए अत्यंत उपयुक्त है। पीपल कार्बन डाईऑक्साइड का 100 प्रतिशत, बरगद 80 प्रतिशत और नीम 75 प्रतिशत ग्रहण कर सकने की क्षमता रखता है, जबकि अन्य पेड़ इससे कम मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करते हैं। सफेदे जैसे वृक्ष तो जमीन के पानी को अधिक मात्रा में ग्रहण करते हैं। बरगद, नीम और पीपल जैसे पेड़ों की जगह यूकेलिप्टस जैसे पेड़ों को लगाना जमीन में पानी की स्तर को गिरा सकता है, जिससे पर्यावरण संतुलन प्रभावित हो सकता है। स्थानीय पेड़ों की सुरक्षा और प्रोत्साहन महत्वपूर्ण है, ताकि प्राकृतिक संतुलन बना रहे। जब वायुमंडल में ऑक्सीजन की कमी होती है, तो तापमान में वृद्धि होती है और गर्मी बढ़ती है। इससे जल में भाप बनने की संभावना भी बढ़ जाती है। यह आपातकालीन परिस्थितियों को उत्पन्न कर सकता है, जो वर्तमान में हीट वेव का कारण बन रहा है। बरगद, पीपल, और नीम के पेड़ों का रोपण करके हम न केवल अपने पर्यावरण को सुंदर बना सकते हैं, बल्कि हम वनस्पति और जीवन की विविधता को भी बढ़ा सकते हैं। इसलिए, हमें उनकी रक्षा और सुरक्षा के प्रति जिम्मेदारी बढ़ानी चाहिए।

चिट्ठी 2

■ मुनीष भाटिया, कुरुक्षेत्र

इनकी चिट्ठियां भी सराहनीय रहीं

आलंपर से रत्नेश कुमार चौहान, हरिद्वार से अरुण कुमार पाठक, दिल्ली से विजय किशोर तिवारी, लखनऊ से रतन कुमार श्रीवास्तव 'रत्न', देहरादून से त्रिपि मल्ल, मेरठ से डॉ. सुधाकर आशावादी, मैनीपाल से दीपक गोंगाई, मिर्जापुर से सलिल पांडेय, खाड़मेर से मुकेश चोहान 'अमल', इंदौर से अमृतलाल मारू 'रवि', पटना से सरिता प्रसादा

हमें लिखें
abhiyan@amarujala.com

कुछ अलग

इतिहास के कैमरे में धुंधली पिक्चर

दशकों पहले बने जासूसी कैमरे खराब पिक्चर क्वालिटी के कारण सफल नहीं हो पाए।

जासूसी की दुनिया में स्पाई कैमरों ने खास भूमिका निभाई है। इसने बड़े-बड़े केसों को सुलझाने में मदद की। अमेरिका के रॉबर्ट डी. ग्रे ने सन 1885 में सबसे शुरुआती व्यावसायिक जासूसी कैमरा बनाया था। इस कैमरे को शर्ट के नीचे पहना जाता था। इसमें बटन के छेद से छोटा-सा लेंस निकलता था, जो छोटी और गोल तस्वीरें लेता था।

इतिहास में झांकें तो जासूसी कैमरों की एक शानदार शृंखला मौजूद है। इनमें से कुछ को रोजमर्रा की वस्तुओं में आसानी से छुपाया जा सकता था। अगर आकार की बात करें तो कुछ विशेष कैमरे किताब, दूरबीन, रेडियो प्लेयर, माचिस की डिब्बी और यहां तक कि एक हैंडगन की तरह दिखते थे। इनमें से सबसे दिलचस्प सिगरेट कैमरा था, जिसे द्वितीय विश्व युद्ध के बाद डिजाइन किया गया था। यह एक आकर्षक लकी स्ट्राइक स्पाई कैमरा था। लकी स्ट्राइक ब्रिटिश-अमेरिकन टोबैको समूह के स्वामित्व वाला सिगरेट का अमेरिकी ब्रांड था। इस ब्रांड के नाम पर ही इसका नाम 'लकी स्ट्राइक स्पाई कैमरा' रखा गया। इस बेहद छोटे कैमरे को सिगरेट के पैकेट के बाहरी आवरण के अंदर फिट करने के लिए डिजाइन किया गया था। कागज के अंदर होने के बावजूद यह अलग-अलग शटर गति के साथ 16 मिलीमीटर के 18 शॉट लेने में सक्षम था। वहीं 1950 के दशक में जापान में पुलिस के उपयोग के लिए दो जासूसी कैमरे बनाए गए, जो कि पिस्तौल पर आधारित थे। ये 16 मिलीमीटर के बजाय 9.5 मिलीमीटर की पिक्चर देते थे। यह कैमरा आकार में छोटा था, लेकिन फोटो की कमजोर गुणवत्ता की वजह से विफल रहा। हालांकि इस दशक में बने सभी जासूसी कैमरों का डिजाइन बेहतरीन था, लेकिन खराब पिक्चर क्वालिटी के कारण वे बस इतिहास का एक हिस्सा भर बनकर रह गए।

■ लवकुश नारायण, जम्मू

मां के साथ-साथ
मां के संग-संग

यह तस्वीर अपने समय की मशहूर अदाकारा नूतन की है। इसमें वह अपनी मां शोभना समर्थ के साथ हैं।

■ सहारनपुर से मनीष स्वामी

छायानट

अमिताभ के हाथ की चोट बन गई स्टाइल

फिल्म 'शराबी' में अमिताभ बच्चन का वो स्टाइल काफी मशहूर हुआ था, जिसमें वह अक्सर एक हाथ पतलून की जेब में रखते हैं और दूसरे हाथ से अद्धयभी करते हैं। दरअसल, यह स्टाइल नहीं था, बल्कि उन दिनों अमिताभ बच्चन का हाथ दिवाली पर बम फटने से बुरी तरह जल गया था, लेकिन अमिताभ ने उस हाथ को जेब में रख कर एक रुमाल के साथ 'दे दे प्यार दे' गाने को शूट किया था। वर्षों बाद अपने एक ट्वीट में अमिताभ बच्चन ने लिखा, "दिवाली पर बम फटने से मेरा हाथ बुरी तरह घायल हो गया था। अपना अंगूठा, उंगली की तरफ हिलाने के लिए भी मुझे दो महीने लग गए थे।" यह दो फिल्म थी, जिसमें नायक के शराबी होने के बावजूद दर्शकों की सहानुभूति उसके साथ थी, क्योंकि वह हर स्तर पर मानवीय नजर आता था। वरना उन दिनों आमतौर पर नायक को घोर शराबी के रूप में नहीं दिखाया जाता था, जब तक कि खलनायक ने साजिश के तहत उसे दारू न पिला दी हो। लेकिन 'शराबी' का नायक इससे अलग था।

■ धर्मेंद्र बंटी, बरेली

विपक्ष की जिम्मेदारी भी बढ़ गई है!

अब सदन की विभिन्न समितियों की संरचना अधिक संतुलित होगी और सदन के अध्यक्ष ऐसे होंगे, जो सभी दलों को स्वीकार्य होंगे। लोकसभा में विपक्ष के नेता के पास सांसदों की पर्याप्त संख्या होगी और उनकी जिम्मेदारी भी बढ़ेगी।

यह दुनिया एक मंच है
और सभी लोग महज अभिनेता हैं।
वे आते हैं और चले जाते हैं
और एक व्यक्ति अपने समय में कई
तरह की भूमिकाएं निभाता है।
-विलियम शेक्सपियर

पी चिदंबरम
पूर्व केंद्रीय मंत्री

जब आप 9 जून, 2024 को यह कॉलम पढ़ेंगे, तब नरेंद्र मोदी तीसरी बार देश के प्रधानमंत्री बन चुके होंगे, लेकिन ये वे मोदी नहीं होंगे। यहां एक दल वाले सरकार के प्रधानमंत्री के रूप में वे नहीं होंगे। इस बार वे कई दलों के गठबंधन के प्रधानमंत्री होंगे। इनमें कई दल ऐसे भी हैं, जिनके पास 20 से कम सीटें हैं, जैसे कि टीडीपी के 16 और जेडीयू के पास 12 सांसद हैं। यह उनके लिए पूरी तरह से एक नया अनुभव होगा। एक प्रचारक, भाजपा के महासचिव, गुजरात के मुख्यमंत्री और भारत के प्रधानमंत्री के अपने 55 साल के सार्वजनिक जीवन में मोदी के पास इस तरह की भूमिका की पहले से कोई तैयारी नहीं है। अब वे एक ऐसे खेल में उतरने जा रहे हैं, जिसके बारे में उन्हें बहुत जानकारी नहीं है।

लोकतंत्र की आंशिक बहाली

हाल ही में खत्म हुए लोकसभा चुनाव में देश के लोगों ने उन चीजों को हासिल किया, जो कुछ सप्ताह पहले तक असंभव लग रहा था। अब दोनों सदनों की कार्यवाही नियम, कानून और सर्वसम्मति से चलेगी, न कि पीठासीन अधिकारी और सदन के नेता के हिसाब से। सदन की विभिन्न समितियों की संरचना अधिक संतुलित होगी और सदन के अध्यक्ष ऐसे होंगे, जो सभी दलों को स्वीकार्य होंगे। लोकसभा में विपक्ष का एक नेता होगा, जिसके पास सांसदों की पर्याप्त संख्या होगी। देश के संविधान को बिना ट्रेजरी बेंच और विपक्ष की सहमति के बिना कोई संशोधन नहीं किया जा सकेगा।

कैबिनेट या मंत्रिपरिषद की बैठकों में अब प्रधानमंत्री द्वारा लिए गए फैसलों का औपचारिक समर्थन नहीं होगा, जैसा कि कई मामलों में हो चुका है। उदाहरण के लिए, अब कैबिनेट को प्रधानमंत्री के कठोर कदम के बारे में केवल 'सूचित' नहीं किया जाएगा, बल्कि राज्यों के अधिकारों को स्वीकार किया जाएगा और उनकी बेहतर सुरक्षा की जाएगी; राज्यों को धन के हस्तांतरण और मंत्रालयों/विभागों और योजनाओं को धन का आवंटन मनमाने ढंग से नहीं किया जा सकेगा, इसमें भी घटक दलों की सहमति लेनी होगी। अब प्रधानमंत्री को सदनों की कार्यवाही में अधिक से अधिक हिस्सा लेना होगा और विपक्ष के प्रश्नों का उत्तर देने और महत्वपूर्ण बहसों में भाग भी लेना पड़ सकता है।

जनादेश से सीख

इस बार लोगों ने अपनी बात कह दी है। वे स्वतंत्रता, बोलने और अभिव्यक्ति के अधिकार, निजता के अधिकार और विरोध के अधिकार को महत्व देते हैं। सरकार को 'देशद्रोह' और 'मानहानि' के फर्जी मामले दायर करने की आदत छोड़नी होगी। यह उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के लिए एक सीख होगी। उन्हें भी 'एनकाउंटर' और 'बुलडोजर न्याय' को छोड़ देना चाहिए। राम मंदिर राजनीति से दूर की चीज है और उसे दोबारा राजनीतिक मकसद के लिए उपयोग नहीं करना चाहिए। 77 साल के समाजवादी पार्टी के नेता अवधेश प्रसाद, फैजाबाद से चुनाव जीत गए, जबकि प्रधानमंत्री के पूर्व मुख्य सचिव और मंदिर निर्माण ट्रस्ट के मुखिया नृपेंद्र मिश्रा के बेटे साकेत श्रावस्ती से चुनाव हार गए। जनता स्वतंत्र मीडिया चाहती है, वह मनगढ़ंत एग्जिट पोल नहीं चाहती और न ही वह प्रधानमंत्री की हर बात का कवरेज चाहती है। जनता पहले से निर्धारित सवाल-जवाब भी नहीं चाहती है और न ही वह ईडी और सीबीआई के दिए गए आंकड़ों पर विश्वास करती है। लोगों का मानना है कि क्षेत्रीय दलों को अपनी मूल मान्यताओं पर डटे रहना चाहिए बजाय इसके कि वह दिल्ली में कुछ कहें और राज्य की राजधानी में कुछ और। ऐसा करने वाली पार्टियों के साथ सख्ती से पेश आना चाहिए, जनता ने पहले असम गण परिषद, शिरोमणि अकाली दल, जननायक जनता पार्टी और जनता दल सेक्यूलर को जनादेश न देकर सबक सिखाया। मौजूदा चुनाव में बीजू जनता दल और वाईएसआरसीपी के साथ भी जनता ने ऐसा ही किया है। यह सबक तेलुगु देशम पार्टी और जनता दल यूनाइटेड के लिए एक नजीर हो सकती है।

विपक्ष को एजेंडा उठाना चाहिए

विपक्ष के पास 10 साल बाद संसद के अंदर जिम्मेदार विपक्षी दल की तरह व्यवहार करने का मौका है। उसे संसद के अंदर और बाहर अपने एजेंडे को मजबूती से उठाना चाहिए। यहां कुछ बातें हैं, जिन्होंने लोगों के मन को प्रभावित किया है और लोगों ने बड़ी संख्या में इंडिया ब्लॉक के उम्मीदवारों को चुना है।

सामाजिक-आर्थिक आधार पर जातीय जनगणना

- संविधान (106वां संशोधन) अधिनियम को तुरंत लागू करें और 2025 से निर्वाचित विधायिकाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण प्रदान करें।
- मनरेगा सहित हर प्रकार के रोजगार के लिए प्रतिदिन 400 रुपये की न्यूनतम मजदूरी लागू करें।
- कृषि ऋण से प्रभावित किसानों के लिए एक स्थायी आयोग नियुक्त करें और उसकी सिफारिशों के अनुसार कृषि ऋण माफ करें।
- सरकारी और सरकार द्वारा नियंत्रित निकायों में खाली पड़ी 30 लाख रिक्तियों को भरें।
- प्रत्येक व्यावसायिक प्रतिष्ठान को प्रशिक्षुओं को नियुक्त करने और वजीफे का बोझ साझा करने के लिए कहा जाए, यदि आवश्यक हो, तो एक्ट को संशोधित किया जाए। अप्रेंटिस एक्ट को तुरंत लागू करें।

अग्निवीर योजना का समापन

- सीएए कानून को खत्म करें, जब तक सुप्रीम कोर्ट इसे संवैधानिक न करार दे।
- जांच एजेंसियों (सीबीआई, ईडी, एनआईए, एसएफआईओ, एनसीबी, आदि) को एक संयुक्त संसदीय समिति की निगरानी में लाया जाए।

एक नया खेल

9 जून को एक नया खेल शुरू होगा। आने और जाने पर नजर बनाए रखें। इस खेल में कुछ नए खिलाड़ी सबसे आगे होंगे।

Licensed by The Indian Express Limited

लोकतंत्र और स्वतंत्रता की सुरक्षा

हमारा जनतंत्र लोकनीतिक है। अब्राहम लिंकन ने लोकनीति की जो परिभाषा की थी, वह अत्यंत प्रसिद्ध है- 'यो शासन, जो लोक का है, लोक द्वारा होता है और लोक के लिए होता है।' ये तीनों बातें एक अच्छी लोकनीति में पाई जाती हैं, पर ये यहां असंभव-सी हैं, जहां एक विशाल देश में करोड़ों मतदाता फैले हों। करोड़ों व्यक्ति स्वयं पर शासन नहीं कर सकते, वे केवल कुछ लोगों को अपने शासक के रूप में चुन सकते हैं।

शास्त्री कोसलेंद्रदास

प्राचीन काल में जब सत्ता राजा के हाथ में होती थी तो राजा उत्तराधिकार से, विजय द्वारा या विरोधियों के सिर काटकर शासक होता था, किंतु लोकनीति में शक्तसक लोगों के सिर गिन कर चुने जाते हैं। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने अपनी पुस्तक 'कल्कि ऑफ द फ्यूचर ऑफ सिविलाइजेशन' में लिखा है- 'लोकतंत्र कार्यरूप में किसी देश को उसके योग्यतम व्यक्तियों द्वारा शासित होने का अवसर बहुत कम देता है। जो थोड़े-से विचारवान लोग होते हैं, उन पर भी विशाल जनता के मत छा जाते हैं।'

खुला आकाश

आज का युग लोकनीतिक है। दुर्भाग्यवश उन नेताओं में, जो आज लोकतंत्र का जयघोष करते हैं, बहुत-से ऐसे हैं, जो खुद स्वार्थ एवं ईर्ष्या की मुट्ठी में बंद हैं।

ब्लेयर वॉलेस ने 'कॉरप्शन इन वाशिंगटन' में लिखा था- 'अमेरिका में जिस व्यक्ति के हाथ में शक्ति है, वह खुद को भयंकर नैतिक संकीर्णावस्था में पाता है। एक ओर उसके समक्ष जनता के प्रति उत्तरदायित्व होते हैं, दूसरी ओर उसे मित्रों एवं सहयोगियों के प्रति वफादारी भी प्रदर्शित करनी होती है।' हमारे मंत्रियों एवं राज्य कर्मचारियों के समक्ष इसी प्रकार की विषम अवस्थाएं होती हैं।

आज का युग लोकनीतिक है और लोकनीति के महत्वपूर्ण मूल्य हैं- न्याय, स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृभाव, लेकिन दुर्भाग्यवश उन नेताओं में, जो आज लोकतंत्र का जयघोष करते हैं, बहुत-से ऐसे हैं, जो खुद स्वार्थ एवं ईर्ष्या की मुट्ठी में बंद हैं। कौटिल्य ने दो हजार वर्षों से अधिक पहले कहा था- 'शक्ति मनुष्य को मदमत्त कर देती है।'

बाहरी लोगों द्वारा सदियों तक विजित होने के बाद हमारे देश ने स्वतंत्रता पाई थी। इस दुर्लभ स्वतंत्रता की सुरक्षा और आर्थिक विषमता के बीच समानता रखने के लिए हमारे नेताओं को अत्यधिक प्रयास करने की आवश्यकता है। शक्तिशाली दलों एवं सामाजिक संप्रदायों से हमें स्वतंत्रता की रक्षा करनी है, साथ ही धनी लोगों के प्रभुत्व से भी लोकतंत्र को बचाना है।

सच को सोने की तरह पाया जाता है। उससे वह सब अलग करना होता है, जो सच नहीं है। -लिखो टॉलस्टॉय

दुनिया भर के केंद्रीय बैंक दबाकर सोना खरीद रहे हैं। सोने की कीमतें अपनी रिकॉर्ड ऊंचाई पर हैं, मगर बैंक पगलाए हुए सोना जुटाने में लगे हैं। वह भी अब तक की सबसे ऊंची कीमत पर। दुनिया में अब तक जितना सोना निकाला गया है, उसका 20 फीसदी हिस्सा विश्व के केंद्रीय बैंकों की तिजोरियों में है।

सोने के लिए पागल दुनिया

घाना 2023 से तेल का भुगतान गोल्ड में कर रहा है। रूस ने युद्ध के दौरान रुबल देकर सोना जुटाने का एलान किया था, तो क्या नए गोल्ड स्टैंडर्ड की आहट है?

अंशुमान तिवारी
वरिष्ठ लेखक-पत्रकार

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) लंदन की तिजोरियों से सोना निकालकर भारत ला रहा है। इन तिजोरियों के इस्तेमाल की अपनी लागत जो है। आरबीआई के पास करीब 822 टन सोने का भंडार है। आरबीआई ने 2019 से 2024 के बीच 209 टन सोना खरीदा है। इतना सोना है, तो इसे संभालने का भी इंतजाम है। भारत ही क्यों? दुनिया भर के केंद्रीय बैंक दबाकर सोना खरीद रहे हैं। चीन ने लगातार 17 महीने सोने की खरीद की। विश्व के केंद्रीय बैंकों के पास अब करीब 2,262 टन सोना जमा है।

सोने की कीमतें अपनी रिकॉर्ड ऊंचाई पर हैं, मगर केंद्रीय बैंक पगलाए हुए सोना जुटाने में लगे हैं। यह भी अब तक की सबसे ऊंची कीमत पर। दुनिया में अब तक जितना सोना निकाला गया है, उसका 20 फीसदी हिस्सा विश्व के केंद्रीय बैंकों की तिजोरियों में है। इस दीवानगी की वजह क्या है? गोल्ड स्टैंडर्ड तो कब का दफन हो गया, जिसमें किसी देश की करेंसी का मूल्यांकन सोने में किया जाता था। केंद्रीय बैंक तो संप्रभु करेंसी के मालिक हैं, जो सोने में नापे जाने की शर्त से मुक्त हैं। बाजार बता रहा है कि बैंकों को दुनिया भर की करेंसी, खासतौर पर डॉलर में गिरावट के डर से उनके विदेशी मुद्रा भंडार सोने की आमद से चमक रहे हैं।

घाना 2023 से तेल का भुगतान गोल्ड में कर रहा है। रूस ने युद्ध के दौरान रुबल देकर सोना जुटाने का एलान किया था, तो क्या नए गोल्ड स्टैंडर्ड की आहट है?

आइए, टाइम मशीन का मोटर गुर्रा रहा है, अपनी सीट पकड़िए और उड़ चलते हैं गोल्ड स्टैंडर्ड की रोमांचक दुनिया में।

अब हम अमेरिका के न्यू हैंपशायर के ऊपर से उड़ रहे हैं। पर्वतों से घिरा यह रिजॉर्ट टाउन, जो स्कॉटिश दीवानों का गढ़ है। हम बढ़ रहे हैं 18वीं सदी के आखिरी दशकों की तरफ। यहां कोयला और रेलवे का विकास हो रहा है। कोयला व रेलवे के कारोबार से अमीर बने जोसेफ स्टोकिनी मार्टन वॉशिंगटन नाम का होटल बना रहे हैं। यह होटल 21वीं सदी में मौजूद रहेगा, मगर इससे पहले यह अनोखा इतिहास बनाएगा।

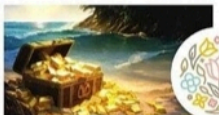

टाइम मशीन ले गियर बदला है। अब हम 1944 में हैं। दूसरे विश्वयुद्ध का खून-खच्चर चरम पर है। हम उसी मार्टन वॉशिंगटन होटल पर पहुंचे हैं, जो बड़ी जंग के बीच एक बड़े समझौते की तैयारी कर रहा है। यहां 44 देश जुटे हैं, जिनमें ब्रिटिश इंडिया भी है, तालियों की गूंज में नई आर्थिक व्यवस्था बन गई है। विश्व के प्रमुख देशों ने विश्व बैंक व अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष यानी आईएमएफ जैसी संस्थाओं की बुनियाद रख दी है। यहीं से निकल रही है एक नई मौद्रिक व्यवस्था, यानी गोल्ड स्टैंडर्ड। कागजी मुद्रा का सोने में मूल्यांकन। एक औंस सोने के बदले 35 अमेरिकी डॉलर, दुनिया ने मिलकर अमेरिका को गोल्ड स्टैंडर्ड का संचालक बना दिया है। अमेरिका को इस पैमाने को कायम रखना है। मतलब, अगर सोने की विनिमय दर 35 डॉलर से नीचे जाती, तो अमेरिका को डॉलर छापकर इसे संतुलित करना होता था। गोल्ड स्टैंडर्ड के साथ ही उस वक्त की तीन बड़ी मुद्राओं-ब्रिटिश पाउंड, जर्मन मार्क, फ्रेंच फ्रैंक के विनिमय का आधार अमेरिकी डॉलर हो गया है। मौद्रिक स्टैंडर्ड का यह अनोखा प्रयोग है, जिसे युद्ध से उबरती दुनिया ने अपना लिया है। अब बढ़ते हैं 1960 के फ्रांस की तरफ, जहां दिखेगी एक अनोखी कूटनीतिक जंग। बताते चलें कि 1960 के बाद वक्त ने करवट ली। जापान और यूरोप का निर्यात तेजी से बढ़ा। विश्व व्यापार में अमेरिका का हिस्सा घटने लगा। अमेरिकी डॉलर की मांग कम हो गई, तो दुनिया के देश अमेरिका से डॉलर के बदले सोना मांगने लगे। इसी दौरान अमेरिका में रखा खर्च बढ़ाने के लिए और ज्यादा करेंसी छापी गई। आपके सामने अखबारों की सुर्खियां तैर रही हैं, जो बता रही हैं कि बाजार में अमेरिका के डॉलर ज्यादा हो गए व अमेरिका के पास सोना कम रह गया। इसके साथ ही दुनिया के मुद्रा बाजार में अमेरिका की ताकत कम होने लगी।

अब हम पेरिस में हैं। माहक पर गरज रहे फ्रांस के राष्ट्रपति चार्ल्स डे गॉल ने फ्रांस के नए राजनीतिक दौर की शुरुआत की है। पेरिस की राजनीतिक हवा में आपको यह पता चल जाएगा कि यूरोप के सबसे तेज-तर्रार नेताओं में से एक चार्ल्स डे गॉल अमेरिका विरोधी हैं। फ्रेंकी रूजवेल्ट से लेकर रिचर्ड निक्सन तक छह अमेरिकी राष्ट्रपतियों के साथ उनके रिश्ते ज्यादातर खट्टे रहे हैं। अब चार्ल्स डे गॉल ने अमेरिकी अगुआई वाले गोल्ड स्टैंडर्ड को निशाना बनाया है। गॉल ने फ्रांस में अमेरिका से डॉलर के बदले सोना लेना शुरू कर दिया है। इस कदम का रहस्य खुलने तक फ्रांस करीब 15.करोड़ डॉलर के बदले सोना दे चुका है।

अब खबरों पर नजर जमाइए। डे गॉल ने एलान कर दिया है कि फ्रांस के पास जितने भी अमेरिकी डॉलर हैं, उनके बदले वह अमेरिका से सोना वसूल करेगा। किसी मित्र देश की तरफ से यह अमेरिका पर सबसे बड़ा कूटनीतिक हमला है। फ्रांस के बाद स्पेन ने भी अमेरिका से सोना वसूल लिया। अब बाजार में सोने की कीमत खौलने लगी है। यह अक्तूबर,1960 है, जब सोने की कीमत रिकॉर्ड 40 डॉलर प्रति औंस तक पहुंच गई।

अब हम लंदन चलते हैं, ब्रिटेन, पश्चिम जर्मनी, इटली, फ्रांस, स्विट्जरलैंड, नीदरलैंड व अमेरिका ने मिलकर लंदन गोल्ड पूल बनाया है। इन देशों के पास उपलब्ध सोने के भंडारों के इस्तेमाल से गोल्ड स्टैंडर्ड को बचाने की कोशिश की गई है। इस भंडार के जरिये 35 डॉलर प्रति औंस की कीमत को बचाया जा रहा है। इस गठजोड़ में दरारों पर नजर रखते हुए हमारी टाइम मशीन 1968 में आ गई है। फ्रांस ने इससे नाता तोड़ लिया है और लंदन गोल्ड पूल ढह गया। दुनिया में गोल्ड स्टैंडर्ड की उल्टी गिनती शुरू हो गई है।

सोने की खबरों के बीच आपको पता चलेगा कि 1962 में अमेरिकी फेडरल रिजर्व ने दुनिया के नौ केंद्रीय बैंकों के साथ एक स्वैप सुविधा शुरू की थी। इनमें ब्रिटेन, तब का पश्चिम जर्मनी, इटली, फ्रांस और कनाडा प्रमुख थे। कोशिश थी कि डॉलर के बदले सोने की मांग सीमित व संतुलित की जा सके, लेकिन अमेरिका के मौद्रिक सिस्टम की दरारें खुल चुकी थीं। सोना कम था व डॉलर की भरमार थी। अंततः गोल्ड स्टैंडर्ड का अंत आ पहुंचा।

टाइम मशीन लंदन से वॉशिंगटन आ गई है। यह 1971 का ऐतिहासिक वर्ष है। अमेरिकी राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने डॉलर की सोने से परिवर्तनीयता खत्म कर दी। अमेरिका में गोल्ड के आयात पर दस फीसदी इंपोर्ट ड्यूटी लगा दी गई। गोल्ड स्टैंडर्ड खत्म हो गया। सोना दुनिया की आधारभूत मुद्रा नहीं रहा है। नई मौद्रिक प्रणाली में डॉलर नई आधारभूत मुद्रा थी। अब संप्रभु करेंसी सोने पर आधारित नहीं थी। इसलिए इनमें तेज उतार-चढ़ाव होने लगा। इसका बड़ा लाभ यह है कि अर्थव्यवस्था की जरूरत के लिए मुद्रा छापी जा सकती थी, मगर छापाखानों से आगे महंगाई भी निकलने लगी थी। नजर आएगा कि नई मौद्रिक प्रणाली का उद्घाटन अमेरिका में ग्रेट ड्रम्फलेशन यानी महा महंगाई के साथ हो रहा है।

टाइम मशीन वापस 2024 में आ गई है। हम अब मुंबई में हैं, जहां रिजर्व बैंक लंदन से सोना लाने की तैयारी में लगा है। दुनिया के बैंक डॉलर बेचकर सोना जुटा रहे हैं। उनके विदेशी मुद्रा भंडार में सोने का हिस्सा बढ़ रहा है। संप्रभु मुद्राएं टूट रही हैं। महंगाई जिद्दी हो चली है। सोने की कीमत रिकॉर्ड बना रही है। लोग पूछ रहे हैं, कि जब सोना सस्ता होगा, तब ये बैंक क्या करेंगे? इनके विदेशी मुद्रा भंडारों की कीमत टूटेगी, तो मुद्राओं का क्या होगा या फिर सारे बैंक मिलकर सोने की महंगाई को स्थायी बना देंगे?

बढ़ा ही दिलचस्प मौद्रिक दौर है यह।

फिर मिलते हैं, अगले सफर पर...

टाइम मशीन
अतीत से सुनें वर्तमान की धड़कन ■ हर पखवाड़े

गूगल सब जानता है?

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति।।

अर्थात ज्ञानी पुरुष भी अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य करता है, क्योंकि सभी प्राणी तीनों गुणों से प्राप्त अपनी प्रकृति का ही अनुसरण करते हैं। भला दमन से क्या हो सकता है?

- भीष्म पर्व, गीता 3/33
(अर्जुन के प्रति सखाता भगवान श्रीकृष्ण का गीतोपदेश)

प्रस्तुति : विवेक चौरसिया

गूगल सब जानता है। आप उससे पूछें कि केलों को लंबे समय तक ताजा कैसे रख सकते हैं, तो वह आपको जवाब देगा कि ठंडी जगह पर रखकर और सेब जैसे दूसरे फलों से दूर रखकर। लेकिन अपने प्रतिद्वंद्वी चैट जीपीटी की जेनरेटिव एआई तकनीक का उपयोग जब गूगल करता है, तो उसके नतीजे ऐसे हैं, जिनमें गूगल संघर्ष करता दिखता है। यह बताता है कि अंतरिक्ष में अंतरिक्ष यात्री बिल्लियों से मिले और उनकी देखभाल की।

इतना ही नहीं, गूगल यह सुझाव भी देता है कि हर व्यक्ति को स्वस्थ रहने के लिए रोज एक छोटी चट्टान खानी चाहिए, क्योंकि ये चट्टानें खनिजों और विटामिन का स्रोत होती हैं। यह पिज्जा पर गोंद डालने का सुझाव भी देता है। जाहिर है कि अगर आप आंख बंद कर गूगल की बात मानने की सोच रहे हैं, तो आप संकट में हैं।

टॉबी वॉल्श
एआई प्रोफेसर, न्यू साउथ वेल्स यूनिवर्सिटी

गूगल का जेनरेटिव एआई मॉडल सेहत के लिए रोज एक छोटी चट्टान खाने का सुझाव देता है, क्योंकि यह खनिजों से भरपूर होती हैं। कहीं आप भी ऐसा करने तो नहीं चले!

आप करेंगे कि इंटरनेट पर चट्टानें खाने के बारे में लेख तो नहीं मिलते। दरअसल चट्टानें खाने के बारे में एक व्यंग्यात्मक लेख है 'द ओनियन', जिसे करोड़ों बार पढ़ा गया है। गूगल एआई इस लेख के आधार पर चट्टान खाने की सलाह देता है। क्या प्रामाणिक तथ्य है और क्या व्यंग्य, यह गूगल एआई नहीं समझता। हैं। जेनरेटिव एआई टूल के साथ बुनियादी समस्या है कि वह सत्य को नहीं जानता। आपके सवालों के जवाब वह इंटरनेट की दुनिया में बिखरी जानकारियों में खंगालता है।

दरअसल, जेनरेटिव एआई टूल के मूल्य हमारे मूल्यों से अलग हैं। वह सिर्फ इंटरनेट से प्रशिक्षित है, और अगर यही मनुष्य की खोजों का भविष्य है, तो हमारी भविष्य की यात्रा मुश्किल होना तय है। गूगल, ओपन एआई और माइक्रोसॉफ्ट से प्रतिस्पर्धा जरूर कर रहा है, लेकिन जैसा इसके सीईओ सुंदर पिचाई ने पिछले वर्ष कहा था कि इसे सावधान रहने की जरूरत है। गूगल का प्रबंधन जानता है कि सवालों के सही उत्तर न मिलने पर इससे लोगों का विश्वास उठ जाएगा। लेकिन अरबों डॉलर के व्यवसाय मॉडल में गूगल यह जोखिम उठा रहा है। ये चिंताएं यों ही नहीं हैं। वैश्विक स्तर पर प्रतिदिन 40 से 60 करोड़ डॉलर का निवेश एआई पर किया जा रहा है। इतने बड़े निवेश को देखकर अब सरकारें भी सजग हो रही हैं कि एआई का जिम्मेदारी से उपयोग सुनिश्चित करने के लिए विनियमन की जरूरत हो सकती है। कई एआई स्टार्ट-अप एआई निर्मित कृत्रिम डाटा के लाभों का प्रचार कर रहे हैं, लेकिन वर्तमान एआई मॉडल में पूर्वाग्रह और गलतियां बढ़ने का भी जोखिम है।

जानना जरूरी है
संस्कृति के पन्नों से

आशुतोष गर्ग
लेखक एवं अनुवादक

देवदूत ने कहा, 'रुरु! उस कन्या को पुनर्जीवन देने के लिए तुम्हें अपनी आधी आयु देनी पड़ेगी। यदि तुम ऐसा कर सको, तो प्रमद्वरा जी उठेगी।'

रुरु की मृत पत्नी कैसे हुई पुनर्जीवित

महर्षि भृगु के पौत्र प्रमति ने घृताची नाम की अप्सरा से एक पुत्र उत्पन्न किया। उसका नाम रुरु था। इसी तरह गंधर्वराज विश्वावसु और अप्सरा मेनका की भी एक पुत्री हुई। परंतु मेनका, कन्या के जन्म के बाद उसे स्थूलकेश मुनि के आश्रम के पास छोड़कर चली गई। स्थूलकेश कन्या को अपने आश्रम में ले आए और उसका पालन-पोषण करने लगे। बालिका बुद्धि, रूप और उत्तम गुणों से सुशोभित थी। वह संसार की समस्त प्रमदाओं (सुंदर स्त्रियों) में श्रेष्ठ दिखती थी, इसलिए स्थूलकेश ने उसका नाम 'प्रमद्वरा' रख दिया। एक दिन संयोग से, प्रमतिनंदन रुरु ने प्रमद्वरा को महर्षि स्थूलकेश के आश्रम में देखा। उसे देखते ही रुरु मंत्रमुग्ध हो गया, तो प्रमति ने स्थूलकेश से रुरु के लिए प्रमद्वरा का हाथ मांगा।

धूप आने दो

स्थूलकेश विवाह के लिए तैयार हो गए। आगामी उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र में विवाह होना निश्चित हो गया।

विवाह से कुछ ही समय पहले प्रमद्वरा अपनी सखियों के साथ वन में घूम रही थी कि तभी मार्ग में एक सांप बैठा था। प्रमद्वरा ने ध्यान नहीं दिया और उसका पैर सर्प के ऊपर पड़ गया। सर्प ने प्रमद्वरा को डस लिया और वह उसी क्षण मूर्छित होकर गिर पड़ी। उसके शरीर का रंग उड़ गया और कुछ ही देर में प्रमद्वरा की मृत्यु हो गई। उसके बंधु-बांधव उसे मृत देखकर विलाप करने लगे। आश्रम में हाहाकार मच गया। उसे जीवित देखकर सब जितने प्रसन्न होते थे, उसकी मृत देह उतना ही कष्ट दे रही थी।

प्रमद्वरा का मुख शांत और विकार रहित था। ऐसा लगता था, मानो वह उठकर अभी बोलने लगेगी। सर्प-विष के प्रभाव से चेतना-शून्य हो चुकी प्रमद्वरा को स्थूलकेश के अतिरिक्त अन्य तपस्वियों ने देखा, जिनमें महाजानु, कुशिक, शंखमेखल, उद्दालक, कठ, श्वेत, भारद्वाज, कौणकुत्स्य, आर्टिषेण, गौतम आदि भी सम्मिलित थे। वे सब प्रमद्वरा को प्राणशून्य देखकर रोने लगे। रुरु भी प्रमद्वरा के शव पर विलाप कर रहा था। फिर वह सहसा उठा और एक समीपवर्ती वन में जाकर जोर-जोर से रोने लगा।

● रुरु, करुण स्वर में बोला, हाय! मेरी प्रमद्वरा, मुझे व बांधवों को शोकाकुल करके भूमि पर निष्प्राण पड़ी है। इससे बड़ा दुख और क्या होगा?

'यदि मैंने दान दिया हो, तपस्या की हो अथवा गुरुजनों की भलीभांति आराधना की हो, तो उसके पुण्य से मेरी प्रमद्वरा जीवित हो जाए! यदि मैंने जन्म से लेकर अब तक मन और इंद्रियों पर संयम रखा हो और ब्रह्मचर्य का दृढ़तापूर्वक पालन किया हो, तो मेरी प्रमद्वरा अभी जी उठे! यदि पापी असुरों का नाश करने वाले, इंद्रियों के स्वामी भगवान श्रीकृष्ण में मेरी अविचल भक्ति हो, तो यह कल्याणी प्रमद्वरा तुरंत जी उठे!' इस तरह जब रुरु विलाप कर रहा था, तो एक देवदूत उसके पास आया और बोला, धर्मात्मा रुरु! तुम दुख से व्याकुल हो, परंतु जिस मनुष्य की आयु समाप्त हो जाती है, उसे फिर जीवन नहीं मिल सकता। अतः तुम शोक मत करो। परंतु इस विषय में देवताओं ने एक उपाय निश्चित किया है। यदि उसे करना चाहो, तो तुम प्रमद्वरा को फिर से पा सकते हो।

रुरु बोला, हे देवदूत! देवताओं ने कौन-सा उपाय निश्चित किया है? मुझे भी बताइए। मैं वही करूंगा, जिससे मेरी प्रमद्वरा मुझे वापस मिल जाए। देवदूत ने कहा, रुरु! उस कन्या को पुनर्जीवन देने के लिए तुम्हें अपनी आधी आयु देनी पड़ेगी। यदि तुम ऐसा कर सको, तो प्रमद्वरा जी उठेगी। यह सुनकर रुरु तनिक भी नहीं घबराया। वह बोला, मैं प्रमद्वरा को अपनी आधी आयु देता हूं।

रुरु के ऐसा कहते ही गंधर्वराज विश्वावसु और देवदूत, दोनों सत्पुरुषम धर्मराज के पास गए और बोले, 'हे धर्मराज! रुरु की पत्नी प्रमद्वरा की सर्पदंश से मृत्यु हो गई थी। रुरु अपनी पत्नी को पुनर्जीवित करने के लिए अपनी आधी आयु देने को तैयार हो गया है। अतः रुरु की आधी आयु प्रमद्वरा को देकर उसे जीवित कर दीजिए!' तब धर्मराज ने कहा, 'मैं वचन देता हूं कि रुरु की पत्नी प्रमद्वरा रुरु की आधी आयु प्राप्त करके जीवित हो उठेगी।' उधर धर्मराज ने वचन दिया और इधर प्रमद्वरा पुनर्जीवित होकर ऐसे उठ बैठी, मानो गहरी नींद से जागी हो। इस अद्भुत घटना के बाद प्रमति और स्थूलकेश ने नियत मुहूर्त पर रुरु और प्रमद्वरा का विवाह करा दिया।

अध्ययन कक्ष

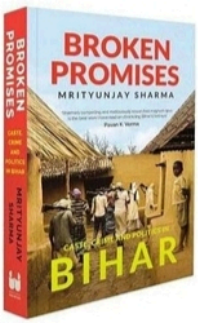

ब्रोकन प्रॉमिसेज
कास्ट, क्राइम ऐंड पॉलिटिक्स इन बिहार

लेखक : मृत्युंजय शर्मा

प्रकाशक : वेस्टलैंड बुक्स
मूल्य : 699 रुपये

बदहाली के वे डेढ़ दशक

उद्यमी और सामाजिक कार्यकर्ता मृत्युंजय शर्मा की *ब्रोकन प्रॉमिसेज* किताब में बिहार के स्वर्णिम इतिहास का जिक्र किया गया है, तो लालू यादव के जंगलराज और नीतीश कुमार की अवसरवादी राजनीति को भी बताया गया है।

बिहार देश के उन राज्यों में से है, जो किसी न किसी कारण से हमेशा चर्चा में रहता आया है। यह आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से देश के सबसे समृद्ध राज्यों में से रहा है। वैशाली अगर दुनिया का पहला गणराज्य माना जाता है, तो जैन और बौद्ध धर्म की यह जन्मभूमि रहा है। लेकिन आजादी के बाद से धीरे-धीरे बिहार पिछड़े राज्य के रूप में तब्दील होता चला गया।

लेखक कहते हैं, 'यह विडंबना ही है कि जो बिहार शिक्षा और मुफ्त जन स्वास्थ्य सुविधा का केंद्र था, तथा जहां जातिगत और सामाजिक असमानता के खिलाफ आंदोलन चले, वह राज्य आज खुद ही इन बीमारियों का शिकार बन गया है।' लेखक मृत्युंजय शर्मा ने बिहार का इतिहास नहीं लिखा है। इस पुस्तक के केंद्र में दरअसल 1990 का बिहार है, जब यह राज्य कुशासन के लिए ज्यादा जाना जाता था। लेखक ने खुद माना है कि बिहार भारत के सबसे जटिल सामाजिक-राजनीतिक राज्यों में से है।

हालांकि लालू के जंगल राज पर भी कई किताबें लिखी गई हैं, लेकिन गहन शोध के बाद तैयार की गई इस पुस्तक में लंबे समय से चली आ रही कांग्रेस सरकारों के पतन, लोहियावादी राजनीति के साथ ओबीसी की दावेदारी का उदय, जयप्रकाश नारायण का आंदोलन, जिसने लालू और नीतीश जैसे युवा नेता पैदा किए, कर्पूरी ठाकुर का आरक्षण फॉर्मूला, नक्सलवाद का उदय और लालू प्रसाद की समाजवादी सरकार आदि विषयों पर विस्तार से विचार किया गया है। उद्यमी और सामाजिक कार्यकर्ता मृत्युंजय शर्मा की इस किताब में बताया गया है कि गंभीर कुशासन, फलते-फूलते अपराध सिंडिकेट, जाति सेनाओं और बाहुबलियों ने किस तरह इस राज्य को बर्बाद कर दिया था। लेखक बताते हैं कि लालू के उस डेढ़ दशक के दौर ने बिहार की ऐसी गलत पहचान बना दी थी कि बिहार से बाहर लोग इस राज्य से अपने संबंध के बारे में बताने से कतराते थे।

हालांकि इस किताब से दो सवाल उभरते हैं। एक तो यही कि लालू यादव के करीब डेढ़ दशक के दौर को जंगल राज कहना भले सच हो, लेकिन लालू के उभार ने बिहार जैसे घोर जातिवादी राज्य में निचले तबकों को स्वाभिमान से भर दिया था। बेशक निचले तबके की उम्मीदें पूरी नहीं हुईं। दूसरी बात यह है कि सुशासन बाबू यानी नीतीश के दौर में भी बिहार बहुत आगे नहीं बढ़ पाया। इस तथ्य पर भी विचार जरूरी है कि सत्ता में बने रहने के लिए नीतीश ने बार-बार जिस तरह पलटी मारी, वह राजनीतिक अवसरवाद का चरम तो था ही, इससे बिहार का कोई भला नहीं हुआ। यहां तक कि अपने राजनीतिक अस्तित्व के लिए नीतीश ने लालू के साथ सत्ता साझा करने से भी गुरेज नहीं किया। इसके बावजूद बिहार के अतीत पर यह एक अच्छी किताब है, जिसके जरिये इसके वर्तमान को भी बेहतर तरीके से समझा जा सकता है।

टिप्पणी: नीलामी आओं को सलाह दी जाती है कि वे नीलामी की तिथि से कम से कम 2-3 दिन पूर्व में एमएसटीसी वेबसाइट/पोर्टल पर पंजीकरण कराएं और अपने केवाईसी को वैध करें तथा किसी भी असुविधा से बचने के लिए नीलामी की तिथि से 2 दिन पूर्व ईएमडी जमा कर दें।

स्थान: नई दिल्ली

प्राधिकृत अधिकारी, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

मोदी की तीसरी पारी और कुछ प्रश्न

हालात में एक बुनियादी फर्क है। नरेंद्र मोदी पिछली दो पारियों की तरह इस बार बहुमत संपन्न भारतीय जनता पार्टी नहीं, बल्कि लोकसभा में सर्वाधिक सीट पाने वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के मुखिया हैं। क्या यह अंतर उनकी कार्यशैली और भावी योजनाओं की राह में रोड़े का काम करेगा? देश इस यक्ष प्रश्न से आंदोलित है।

स्कैन करें
आजकल स्तंभ के तहत प्रकाशित आलेखों के लिए

शशि शेखर

आजकल

नरेंद्र मोदी की ताजपोशी में अब सिर्फ शपथ की औपचारिकता शेष है। वह देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के लगातार तीन बार चुने जाने के उस कीर्तिमान की बराबरी में कामयाब हो गए हैं, जिस तक कोई अन्य सत्तानायक नहीं पहुंच सका। हालांकि, हालात में एक बुनियादी फर्क भी है। मोदी पिछली दो पारियों की तरह इस बार बहुमत संपन्न भारतीय जनता पार्टी नहीं, बल्कि लोकसभा में सर्वाधिक सीट पाने वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के मुखिया हैं। क्या यह अंतर उनकी कार्यशैली और भावी योजनाओं की राह में रोड़े का काम करेगा?

देश इस यक्ष प्रश्न से आंदोलित है।

इस सवाल का जवाब ढूंढ़ने से पूर्व उनके नए बने दोस्तों के बयानों पर गौर करना होगा। महज कुछ सप्ताह पूर्व तेलुगुदेशम पार्टी का घोषणा-पत्र जारी करते हुए चंद्रबाबू नायडू ने कहा था- 'हम मुस्लिमों को चार प्रतिशत आरक्षण देंगे और सूबे की प्रत्येक मस्जिद को रख-रखाव के लिए हर माह पांच हजार रुपये दिए जाएंगे।' इसके बरक्स आप प्रधानमंत्री के मुस्लिम आरक्षण और तुष्टीकरण संबंधी वक्तव्यों को याद कर देखिए। आपको जबरदस्त विरोधाभास नजर आएगा। टीडीपी भाजपा के समान नागरिक संहिता संबंधी संकल्प का भी विरोध करती आई है।

यही नहीं, टीडीपी ने आंध्र की महिलाओं को प्रतिमाह डेढ़ हजार रुपये का भत्ता, निःशुल्क बस यात्रा और बेरोजगारों को तीन हजार रुपये प्रतिमाह की राशि देने का वचन भी दिया है। इन संकल्पों को परवान चढ़ाने के लिए बहुत बड़ी रकम की आवश्यकता होगी। आंध्र की सरकार अपने बलबूते इतना धन जुटाने की हैसियत नहीं रखती।

भारतीय रिजर्व बैंक के मुताबिक, आंध्र उन सूबों में शुमार है, जिन पर सर्वाधिक कर्ज है। इसके बावजूद चंद्रबाबू राजधानी अमरावती को बिल्कुल नया रूप देना चाहते हैं। इसके लिए साढ़े तीन लाख करोड़ की दरकार अलग से है। नरेंद्र मोदी के पहले सत्ता-काल में चंद्रबाबू नायडू की ऐसी मांगों के चलते ही केंद्र से खटपट हुई थी। आज जब तेलुगुदेशम पार्टी अपने 16 सांसदों के साथ राजग की सबसे बड़ी सहभागी है, तब हमें चंद्रबाबू की शख्सियत के एक और पहलू पर ध्यान देना चाहिए। वह बेहिसाब सियासी मोल-तोल के अभ्यस्त रहे हैं।

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन का दूसरा बड़ा साझीदार है- जनता दल (यू)। नीतीश कुमार पिछले दस सालों में दो बार राजग को धता बता चुके हैं। वर्ष 2013 में उन्होंने प्रधानमंत्री पद के लिए मोदी की उम्मीदवारी का खुला विरोध किया था। वह चंद्रबाबू नायडू की तरह अपने प्रदेश को विशेष राज्य का दर्जा दिलवाना चाहते हैं। इसके अलावा समान नागरिक संहिता और अग्निवीर जैसे मुद्दों पर उनकी राय भारतीय जनता पार्टी के घोषित रुख से अलग है। राजग के अन्य दल भी अपने-अपने वायदों से बंधे हुए हैं। उनके और भाजपा के बीच हर मुद्दे पर सहमति हो, यह कतई जरूरी नहीं।

इनमें से लगभग सभी कभी न कभी 'इंडिया' ब्लॉक के पुराने स्वरूप, यानी संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) का हिस्सा रहे हैं। उनके निर्णय राजनीतिक मौसम पर निर्भर रहते हैं। यहां एक और तथ्य गौरतलब है कि नीतीश कुमार की पार्टी से रह-रहकर उन्हें प्रधानमंत्री पद के लिए सर्वाधिक योग्य उम्मीदवार बताया जाता रहा। वह अपनी पार्टी के इकलौते नियामक हैं और जब चाहें, तब इस तरह की बयानबाजी पर लगाम लगा सकते हैं। उन्होंने शायद अभी तक इस सिलसिले में कोई सख्त संदेश अपने पार्टीजन को नहीं दिया है।

आप इसे कैसा शगुन मानते हैं?

इन क्षेत्रीय नेताओं की वचनबद्धताओं की याद दिलाकर सूर्याई विपक्ष ने अभी से उन्हें घेरने की कोशिशें शुरू कर दी हैं। मसलन, तेजस्वी यादव ने कुछ दिन पूर्व तेजिया अंदाज में बयान दिया- 'चाचा किंग मेकर की भूमिका में हैं, तो अब विशेष राज्य का दर्जा दिलवाएं। देश भर में जातीय जनगणना करवाएं।' जाहिर है, नायडू हों या नीतीश, चिराग हों या पवार, शिंदे हों या चौधरी, सबके अपने क्षेत्रीय और जातीय आग्रह हैं। वे उनकी उपेक्षा नहीं कर सकते। इसके लिए सभी घटक दल मंत्रिपरिषद में अधिक से अधिक पद और महत्वपूर्ण विभाग पाने की हाड़तोड़ कोशिश करेंगे।

ऐसे में, भाजपा को अपने लोगों की कीमत पर बड़ा दिल दिखाने का मजबूर होना पड़ सकता है। अटल बिहारी वाजपेयी के वक्त में लोकसभा का अध्यक्ष पद तेलुगुदेशम के पास हुआ करता था। संकट और बिखराव के लम्हों में अध्यक्ष का महत्व बहुत बढ़ जाता है। कहीं नायडू अंदरखाने वही मांग दोहरा तो नहीं रहे? वाजपेयी को अपने वक्त में ऐसी तमाम चुनौतियों का सामना करना पड़ा था। उन्हें केंद्र में अपना नेता स्वीकार करने वाली ममता बनर्जी, मायावती और जयललिता अनोखी मांगें और अबूझ चेतावनियां जारी किया करती थीं? नई दिल्ली के गलियारों में उन्हें 'तीन देवियों' के विशेषण से नवाजा जाता था। ऐसी देवियां, जो अपने वरदान से बड़ा प्रतिदान चाहती थीं। यह अटल जी पर चस्पां नियति का क्रूर व्यंग्य था।

मोदी और वाजपेयी के बीच यकीनन बहुत फर्क है, पर यह सवाल पुरगरम है कि मोदी इस 'मुंडे-मुंडे मतिर्भिन्ना' की स्थिति से कैसे निपटेंगे?

जवाब बहुत मुश्किल नहीं है। आप प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अतीत पर नजर डाल देखिए। वह अपनी मेहनत से फर्श से अर्श पर पहुंचे हैं। वर्ष 2001 में गुजरात का मुख्यमंत्री बनने से पहले उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और फिर पार्टी की तरह-तरह से खिदमत की। वह सफल महासचिव के साथ हरियाणा एवं मध्य प्रदेश में कामयाब संगठन मंत्री, चुनाव प्रभारी की भूमिका निभा चुके हैं। इन दोनों राज्यों के बाद गुजरात में भारतीय जनता पार्टी के पैर जमाने में उनकी जबरदस्त भूमिका रही है।

सियासत की समझ रखने वाले सरकार और संगठन का मूलभूत अंतर समझते हैं। जब कोई सरकार में होता है, तो सत्ता का दंड उसके हाथ में होता है। संगठन में हुकूमत की ताकत के बिना लोगों को जोड़ना होता है। मोदी ने दोनों काम बखूबी किए हैं। वह संगठन से सत्ता में आए, इसीलिए पिछले 23 सालों से सिर्फ सफलता की सीढ़ियां चढ़ रहे थे। इस बार उनकी पार्टी जरूर लड़खड़ाई है, पर इसे प्रधानमंत्री की निजी लड़खड़ाहट मान लेना जल्दबाजी होगी।

उनकी एक और विशेषता उन्हें पहले के प्रधानमंत्रियों से अलग करती है। दस साल तक प्रधानमंत्री की कुरसी संभालने से पूर्व लगातार तेरह वर्षों तक वह गुजरात के कामयाब मुख्यमंत्री रहे हैं। इस दौरान उनकी पार्टी केंद्र की सत्ता में रही, तो उसे और उसके सांसदों को विपक्ष की बेंचों पर भी बैठना पड़ा। मोदी ने दोनों ही हालात में गुजरात की बेहतरीन खिदमत की थी। वह तनी हुई रस्सी पर देर तक और दूर तक चलने की कला जानते हैं।

इसकी एक झलक शुक्रवार को संसद के सेंट्रल हॉल में मिली। गठबंधन धर्म और अपनी तीसरी पारी के एजेंडे को उन्होंने जैसे रूपायित किया, सहयोगियों ने उसको वैसे ही ग्रहण किया। वातावरण में उनके प्रति उमड़ती गर्मजोशी की गमक साफ तौर पर महसूस की जा सकती थी।

पुरानी भारतीय परंपरा है कि हम किसी अपरिचित तक को नई पारी अथवा काम के लिए शुभकामना देते आए हैं। नरेंद्र मोदी और राजग के सभी घटकों को दिल से बधाई। आशा है कि वे उन करोड़ों मतदाताओं का मान रखेंगे, जिन्होंने उन्हें बड़ी उम्मीदों के साथ चुना है।

@shekharkahin
@shashishekhar.journalist

जीना इसी का नाम है

धीरेन सोलंकी
युवा पशुपालक किसान

आपके पास नजर हो, तो गधे भी किसी नेमत से कम नहीं

शिक्षक बहाली परीक्षाओं में भी वह बैठे, मगर हर जगह लंबा इंतजार था। निराशा गहराने लगी थी। बेटे की चिंता पिता को भी परेशान कर रही थी। जाहिर है, कारोबारी बनने का गुजराती जज्बा जाग उठा। धीरेन के पिता ने कहीं पढ़ा कि केरल-कर्नाटक में गधी-पालन कारोबार भी होता है।

कुदरत ने इस धरती पर जितने भी जीव पैदा किए हैं, उसने उनमें उनकी उपयोगिता भी सहेजी है। यह हम इंसानों की कमी है, जो अनदेखी अहमियत को नहीं पाए और किसी जीव को पूजने लगे, किसी से खौफजदा हुए, तो कोई हमारी हिकारत का निशाना बन गया। कम से कम उत्तर भारत में गधों को इज्जत की नजर से तो नहीं ही देखा गया। बावजूद इसके कि उनसे खूब काम लिया जाता रहा, उनके लिए उपहास के मुहावरे ही गढ़े गए। मगर गुजरात के धीरेन सोलंकी के लिए गधी किसी नेमत से कम नहीं। इस जीव ने महज 22 साल की उम्र में ही उन्हें करोड़पति बना दिया है। धीरेन की इस कामयाबी ने साबित किया है कि यदि आपके पास नया आइडिया हो, धैर्य हो और आगे बढ़ने का जज्बा हो, तो गधी भी आपको मालामाल कर सकती हैं।

गुजरात के पाटन जिले के मनुंद गांव में पैदा हुए धीरेन सोलंकी का सपना किसी निम्न मध्यवर्गीय परिवार से कुछ खास अलग नहीं था। पिता अरविंदभाई सोलंकी चाहते थे कि बेटा पढ़-लिखकर किसी सरकारी स्कूल में मास्टर लग जाए, तो परिवार की कुछ आर्थिक मदद हो जाएगी। धीरेन अपने परिवार और पिता की अपेक्षाएं समझ रहे थे। उन्होंने अपनी तरफ से कोई कमी नहीं रखी। विज्ञान संकाय से स्कूली पढ़ाई पूरी करने के बाद उन्होंने प्राइमरी शिक्षक प्रमाणपत्र (पीटीसी), केंद्रीय शिक्षक पात्रता परीक्षा (सीटेट) और केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस), सभी परीक्षाएं पास कीं, मगर कहीं कोई स्थायी नियुक्ति नहीं मिली। छोटी-मोटी दूसरी नौकरियां कीं, मगर उनसे परिवार की कुछ खास माली मदद नहीं हो रही थी।

साल 2020 में पड़ोस के प्रदेशों में आयोजित शिक्षक बहाली परीक्षाओं में भी धीरेन बैठे, मगर हर जगह एक लंबा इंतजार था। करीब छह महीने तक परिणामों का इंतजार करने के बाद उनकी निराशा गहराने लगी थी। बेटे की चिंता पिता को भी परेशान कर रही थी। जाहिर है, कारोबारी बनने का गुजराती जज्बा जाग उठा। धीरेन के पिता ने कहीं पढ़ा कि केरल-कर्नाटक में गधी-पालन कारोबार भी होता है। देश में गधी के दूध की मांग या उसके उपयोग के बारे में उतनी जानकारी नहीं है, मगर मलेशिया, चीन और तुर्की जैसे मुल्कों में इसकी भारी मांग है। अरविंदभाई सोलंकी ने यह बात बेटे से कही।

धीरेन इस आइडिया से चौंक गए। उन्होंने शिक्षक बनने का सपना छोड़ ऑनलाइन इसके बारे में जानकारी हासिल करनी शुरू कर दी। अब तक तो उन्हें यह भी पता नहीं था कि इस दूध का क्या-क्या उपयोग होता है। यहां भैंस-गाय के दूध के साठ रुपये लीटर होने पर इतना हंगामा हो उठता है, तो गधी के एक लीटर दूध की कीमत हजारों रुपये जानकर

वह हैरान रह गए। दरअसल, इसके दूध में रोग प्रतिरोधी गुण काफी होता है, लिहाजा कई दवाओं में इसका उपयोग होता है। गाय के दूध से एलर्जी वाले नवजातों के लिए यह किसी रामबाण से कम नहीं होता। फिर कई तरह के सौंदर्य उत्पादों के लिए भी इसकी भारी मांग होती है।

धीरेन के पास 'डंकी फॉर्म' शुरू करने का कोई व्यावहारिक प्रशिक्षण नहीं था। सिर्फ पिता के हौसले और आत्मविश्वास की बदौलत उन्होंने साल 2022 में अपना डंकी फॉर्म शुरू करने का जोखिम उठा लिया। इसके लिए धीरेन ने करीब 40 लाख रुपये का कर्ज उठाया था। इस रकम से उन्होंने 20 गधी खरीदी और एक तीस बाई चालीस फीट का 'शेड' तैयार करवाया, जहां इन सभी पशुओं को रखा जा सके। धीरेन ने सोचा था कि आज गधी खरीदी और कल से उसके दूध की बिक्री शुरू हो जाएगी। मगर, गुजरात में इसकी कोई मांग कहां होनी थी और विदेश इसे पाउडर की शक्ल में ही भेजा जा सकता था।

पहले साल उन्हें काफी घाटा हुआ, क्योंकि दूध को सुरक्षित रखने या उसे पाउडर में बदलने की तकनीक उनके पास नहीं थी। इस काम को करने वाली कंपनियों से करार करने और तालमेल बिठाने में करीब साल भर लग ही गए। उन्हें पहला ऑर्डर पचास किलोग्राम पाउडर का मिला। अमूमन एक किलो पाउडर तैयार करने में 16-17 लीटर दूध लगता है। संयोग से उस समय तक उन्होंने 200 किलोग्राम पाउडर का भंडारण कर रखा था। 63,000 रुपये प्रति किलो के हिसाब से उन्हें उसका भुगतान मिला। काम चल निकला। अब पीछे मुड़कर देखने की जरूरत नहीं थी। ई-कॉमर्स ने उन्हें ग्राहकों का एक विशाल फलक मुहैया करा दिया था।

आज उनके पास हलारी नस्ल की करीब 40 गधी हैं, जिनके दूध से धीरेन तीन लाख रुपये तक महीने की कमाई कर रहे हैं। उन्होंने मवेशियों की देखभाल के लिए तीन-चार लोग रख रखे हैं और अपने पिता के साथ खुद भी पूरी तरह जुटे रहते हैं। धीरेन की यह यात्रा उन हजारों-लाखों नौजवानों को रास्ता दिखा सकती है, जो अपना बेशकीमती वक्त तंत्र और शासन को कोसने में गर्क कर रहे हैं। धीरेन अगर सोचते रहते कि गधी के दूध का कारोबार करने पर समाज उनकी खिल्ली उड़ाएगा, तो वह आज जिस जगह हैं, वहां कभी नहीं पहुंच पाते।

स्व-रोजगार को अंतिम विकल्प के तौर पर देखने का

धीरेन की यात्रा लाखों नौजवानों को रास्ता दिखा सकती है, जो अपना बेशकीमती वक्त शासन को कोसने में गर्क कर रहे हैं। वह अगर सोचते रहते कि गधी के दूध का कारोबार करने पर समाज खिल्ली उड़ाएगा, तो वह आज जिस जगह हैं, वहां कभी नहीं पहुंच पाते।

नजरिया बदलने की जरूरत है, क्योंकि इससे सिर्फ अपनी भलाई नहीं होती, बल्कि आप उसके विस्तार के साथ समाज और देश का भी भला करते हैं। बतौर शिक्षक बच्चों को शिक्षित करने का सुख धीरेन को अवश्य मिलता, मगर वह चार लोगों को रोजगार नहीं दे सकते थे। आज वह एक शिक्षक की औसत तनख्वाह से कई गुणा अधिक कमा रहे हैं। धीरेन सोलंकी की तरह जो भी अनूठी योजना के साथ आगे कदम बढ़ाएगा, कामयाबी उसे ही मिलेगी।

प्रस्तुति : चंद्रकांत सिंह

वो लम्हा

नंदिनी सत्पथी
स्वतंत्रता सेनानी राजनेता

अपने देश को चाहिए ऐसी ही वीर बेटियां

यहां तो राज्यपाल भी हैं और मंत्री भी, जिन्हें उत्कल राज्य संभालना है, तो फिर यूनियन जैक की क्या मजाल, जो यहां शान से लहराकर हमें चिढ़ाए? यहां तो अपना विजयी विश्व तिरंगा प्यारा होना चाहिए, सागर की ओर से आती आजाद हवा के साथ पुरजोर लहराता हुआ!

वहां दिसंबर की गुनगुनी ठंड में वार्षिक खेल उत्सव का उल्लास घुला था। छात्र-छात्राएं अनुशासन में करीने से बैठे थे, सब शिक्षक सजकर अपनी-अपनी जगह विराजमान थे। कटक के प्रतिष्ठित रेवेनशॉ कॉलेजिएट स्कूल में ओड़िशा के राज्यपाल महामहिम चंदूलाल त्रिवेदी पधारे हुए थे। ओड़िशा सरकार के माननीय राजस्व मंत्री भी मौजूद थे। भारत की गुलामी का दौर था, तो कुछ गोरे भी मुरलैद थे और उनकी पुलिस का लवाजमा यहां-वहां तैनात था। पूरा मजमा अंग्रेज बहादुरों के हिसाब से सजा हुआ था और वहीं ऊपर बहुत शान से अंग्रेजों का ध्वज यूनियन जैक लहरा रहा था, जिसे देख-देख एक छात्रा का खून खौल रहा था। अब जब हमारे अपने राष्ट्र का ध्वज लोकप्रिय हो चला है, जगह-जगह फहराया जा रहा है, तब यूनियन जैक की क्या बिसात? अब शिक्षक क्यों डरते हैं और यहां तो राज्यपाल भी हैं और मंत्री भी, जिन्हें उत्कल राज्य संभालना है, तो फिर यूनियन जैक की क्या मजाल, जो यहां शान से लहराकर हमें चिढ़ाए? यहां तो अपना विजयी विश्व तिरंगा होना चाहिए, सागर की ओर से आती आजाद हवा के साथ पुरजोर लहराता हुआ!

छात्रा को पता था कि अपने मन की करने के बाद क्या होगा, पर वह चंद साथियों के साथ चुपचाप यूनियन जैक की ओर बढ़ चलती है और पहुंच जाती है रेवेनशॉ की आलीशान लाल इमारत के शीर्ष पर लहराते विदेशी झंडे तक। नीचे मैदान में उत्सव में मग्न लोगों की नजर जब तक ऊपर उठती है, तब तक यूनियन जैक उतारकर तिरंगा लहरा रहा होता है।

रेवेनशॉ में मौजूद छात्र, शिक्षक और माननीय अतिथि ही नहीं, बल्कि पूरे कटक शहर के लोग निहारते हैं, नीले आसमान पर तिरंगे का लहराता मान-स्वाभिमान। आखिर किसने किया कमाल? और अंग्रेजों को काटो, तो खून नहीं। वे दौड़ पड़ते हैं और 15 वर्षीय दुबली-पतली छात्रा को पकड़ लेते हैं। बुरी तरह पीटते हैं, पर वह तनिक भयभीत नहीं होती, सबके सामने सवालों की बौछार कर देती है, 'क्या उड़ीसा के मुख्यमंत्री हेकृष्ण मेहताब को भारत की स्वतंत्रता प्राप्त करने की क्षमता पर संदेह है? आखिर यह यूनियन जैक पर सवाल क्यों नहीं उठते? यह शोषण का प्रतीक गोरों का झंडा अब यहां क्या कर रहा है?'

फिर क्या, यह तोर-सा बयान शहर, प्रदेश और देश में आग की तरह फैल जाता है। तमाम लोगों की जुबान पर यह चर्चा सज जाती है कि वीर छात्रा का नाम नंदिनी पाणिग्रही है और उसे कतई पसंद नहीं कि आजाद हो रहे देश में अब कहीं भी यूनियन जैक लहराए और उसने ठान लिया है कि उसे यूनियन जैक अगर कहीं दिखेगा, तो उसे उतारकर तिरंगा फहरा देगी।

अचंभित अंग्रेज फटाफट नंदिनी का इतिहास खंगालते हैं। उनके पिता ओड़िया के बड़े लेखक हैं और चाचा शहीद वामपंथी क्रांतिकारी। नंदिनी पहले भी अंग्रेजों से दो-दो हाथ कर चुकी हैं। स्कूल से भागकर सियासी जलसों में शिरकत कर चुकी हैं। वह मां और पिता की डांट भी खूब सुनती हैं, पर उन्हें विस्तार से बताती भी हैं कि आज क्या हुआ? किस नेता को देखा, क्या सुना और क्या किया? उन्हें घर में कुनी नाम से पुकारा जाता है और उनके पिता अक्सर सिखाते हैं कि पहले देश को सामने रखना, उसके बाद समाज और सबसे बाद खुद को। कुनी ने छोटी उम्र में ही बहुत से ऐसे काम किए हैं, जो बड़े लोगों ने भी नहीं किए। ओड़िया साहित्य से विश्व साहित्य तक वह खूब पढ़ती हैं और लिखती भी हैं। बकवास के लिए उनके पास एक पल नहीं और वह अपने बुने कपड़ों को तरजीह देती हैं।

बहरहाल, वीरता की एक घटना ने नंदिनी को राजनीति की मुख्यधारा में ला खड़ा किया। देश आजाद हुआ, तो वह देश सेवा के लिए समर्पित हो गईं। विवाह हुआ, तो उन्हें लोग नंदिनी सत्पथी (1931-2006) के नाम से जानने लगे। महज 31 की उम्र में उन्होंने अपनी सादगी और शौर्य से राज्यसभा को सुशोभित किया। वह केंद्र सरकार में मंत्री रहीं। ओड़िशा की पहली महिला मुख्यमंत्री रहीं। वह एक समय इंदिरा गांधी के बहुत करीब थीं, पर जब आपातकाल थोपा गया, तब उन्हें अच्छा नहीं लगा। मुख्यमंत्री रहते उन्होंने ओड़िशा में शासन-प्रशासन को अत्याचार नहीं करने दिया। उन्हें तब भी पता था कि उनकी पार्टी को यह पसंद नहीं आएगा, पर उन्होंने गलती करने से मना कर दिया। बाद में वह सियासत में हाशिये पर आ गईं, पर साहित्य में सतत सक्रिय रहीं। आज उन्हें 'आयरन लेडी' के रूप में याद किया जाता है। उनके जन्मदिन 9 जून को राष्ट्रीय बेटी दिवस मनाया जाता है। महिलाओं को अब भी अबला समझने वाले इस देश में अक्सर लोग उन्हें याद करते हुए कहते हैं कि ईश्वर अगर बेटी दें, तो नंदिनी सत्पथी जैसी निश्छल निडर।

प्रस्तुति : ज्ञानेश उपाध्याय

हर कवि को एक खलनायक चाहिए

तिरछी नजर

सुधीश पचौरी
हिंदी साहित्यकार

चार जून को मेरा जनतंत्र बच गया, संविधान बच गया, समाज बच गया, मेरा लेखक बच गया, लेखन बच गया और आजादी भी बच गई। मैं बच गया। तू बच गया। मेरी-तेरी कलम बच गई। मेरा-तेरा लिखना बच गया। मेरा विचार बच गया। मेरा हंसना-रोना बच गया। पर तभी मुझे लगा कि ये बचना भी क्या कोई बचना है?

जनतंत्र बच गया, लेकिन फासिज्म भी तो बच गया! तानाशाही भी तो बच गई। जनता ने जनतंत्र बचाया, लेकिन जनतंत्र के शत्रु को भी बचाया... तब जनता ने क्या बचाया? यह जनता भी कैसी विचित्र है साथी? बहुत पहले कवि रघुवीर सहाय ने इस जनता पर अपना क्रोध यह कहकर न्योछावर किया था: *एक मेरी मुश्किल है जनता/ जिससे मुझे नफरत है निस्संग/ जिस पर मेरा क्रोध बार बार न्योछावर होता है।*

इसे देखकर मेरा भी मन करता है कि मैं भी इस जनता पर अपना क्रोध न्योछावर करूं कि ये क्या किया री तूने! जनतंत्र बचाते-बचाते तू उसे भी बचा गई, जिसे हमारी कविता तेरा दुश्मन मानती थी और तुझे बार-बार समझाती थी कि हम जिसे तानाशाह मानते हैं, उसे तू भी तानाशाह मान, लेकिन तूने नहीं माना। जनतंत्र बचाते-बचाते तुमने उसे भी बचा डाला।

हे जनता, सारा कसूर तेरा ही है। तुम 'दस किलो' पर कम मरी, 'पांच किलो' पर ज्यादा मरी; 'एक लाख' पर कम मरी, उससे कम पर ज्यादा मरी। कितनी अवसरवादी है री तू, जबकि मेरा हिंदी लेखक अवसरवादी नहीं है। उसकी कलम समझौता नहीं करती। मेरा कवि दस साल से 'विरोध की कविता' करता रहा। मेरी देखा-देखी न जाने और कितने कवि वैसी ही विरोध की कविता करते रहे और सोचते रहे कि जनता को उन्होंने 'लाइन' दे दी है। अब जनता सब कुछ बदल देगी। तानाशाही की पलट देगी! ऐसा कहां हुआ? जनतंत्र बचा, लेकिन तानाशाही भी तो बच गई और सिंहासन पर भी आ बैठी?

मेरी अकुलाहट देख मेरे गुरु ज्ञानी समझाने लगे कि ध्यान से देखो। जनता ने जो किया, ठीक किया और तेरे जैसे कवियों व कविताओं की खातिर किया।

मैंने पूछा : सो कैसे सर?

वह बोले : अगर तानाशाही पूरी तरह निपट जाती, तो तुम्हारे जैसे कवि किसके विरोध में कविता करते? तब तो कविता खत्म हो हो जाती। न उसका 'आलंबन' होता, न उसके कारनामे 'उद्दीपन' बनते, न तेरी 'हेट पोयट्री' संभव होती। फिर तुम किसके खिलाफ लिखते? जरा सोचो! रावण न होता, तो राम न होते और तुलसी भी न होते। कंस न होता, तो सूरदास न होते और हिंदू-मुस्लिम न होता, तो कबीर भी न होते। आज हर कवि को हर पल एक खलनायक चाहिए। खलनायक न हो, तो वह किस पर कविता करेगा? इसलिए हे तात! जनता ने जब भी कुछ किया, काव्यात्मक-न्याय ही किया है।

ऐसे ज्ञानगर्भित वचन सुन मुझे याद आया कि जनता ने तीन बार आजादी बचाई है और लोगों ने उसे ऐसे ही 'इंजॉय' किया है। 1947 की पहली आजादी को धूमिल ने अपनी कविता पटकथा में यह कहकर इंजॉय किया कि *मैंने कहा आजादी... मेरी नस-नस में बिजली दौड़ रही थी। मैंने कहा आ-जा-दौ और दौड़ता हुआ खेतों की ओर गया।* दूसरी आजादी आपातकाल के बाद आई, तब लोगों ने आजादी की दूसरी खुशी की सांस ली और 4 जून की तीसरी आजादी में मैंने खुशी की सांस ली, पर धूमिल की तरह नहीं ली, क्योंकि दिल्ली की हवा खराब है; न खेतों की ओर दौड़ा, क्योंकि खेत बचे ही नहीं हैं, बल्कि कुछ हंसता कुछ रोता-सा अपने मित्र को कॉल करने लगा- मित्र मेरी आवाज सुनते ही गाने लगा, *दुख भरे दिन बीते रे भैया, अब सुख आयो रे, रंग जीवन में नया लायो रे।*

इस गीत को सुन मैंने भी महसूस किया कि बहुत दिन बाद हिंदी साहित्य में कुछ खुशी कुछ गम लौटा है, इसलिए तू भी जनता के इस काव्यात्मक-न्याय का मजा ले!

कटाक्ष

राजेंद्र धोड़पकर